अध्यात्म बारहखड़ी

पण्डित दौलतरामजी कासलीवाल

संपादकीय

सबसे पहले मुझे इन्दौर में हस्तलिखित अध्यात्म बारहखड़ी देखने को मिली। उसे पढ़ने की मुझे तीव्र जिज्ञासा हुई। अत: मैंने इन्दौर, उदयपुर, जयपुर, अलीगंज आदि स्थानों से अध्यात्म बारहखड़ी की प्रतियाँ प्राप्त कर उन्हें तुलनात्मक दृष्टि से पढ़ना प्रारंभ किया। यद्यपि पढ़ने में आनन्द आता रहा, पर मैं प्रस्तुत ग्रंथ एक साथ पूर्ण पढ़ नहीं सका। मेरे मित्र स्वाध्याय प्रेमी श्री सौभाग्यमलजी जैन, जयपुर और पण्डित श्री गंभीरचंदजी वैद्य,अलीगंज ने अनेक प्रतियों की परस्पर तुलना करते हुए अध्यात्म बारहखड़ी पूर्ण पढ़ी।

हमने इस कृति में इन्दौर से प्राप्त प्रति को मुख्य माना है, तथा इसी कृति के सुगम एवं सरस पदों को ही इकट्ठा करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत कृति चुने हुए पदों का लघु संस्करण है, मूलग्रंथ इस कृति से पाँच गुना है।

सम्पादित कार्य:– (१) ग्रंथ में विशेष छन्दों को चुनकर मंगलाचरण विभाग बनाया है। (२) ॐ, श्र, अ, आ आदि स्वर एवं क, ख आदि व्यंजन के छन्दों को चुनकर संग्रहीत किया है। (३) प्रत्येक पद का छन्द लिखा है। दोहा आदि छन्द में रचित पदों को एकत्र किया है। (४) प्रत्येक स्वर और व्यंजन का प्रथम छन्द का प्रथम अक्षर बड़ा किया है। (५) स्वर एवं व्यंजन के प्रारंभ में संस्कृत श्लोक दिया है। (६) प्रत्येक पृष्ठ पर स्वर-व्यंजन का एवं छन्दों की संख्या दी है। (७) पाठकों को पढ़ने में सुगमता हो, इसलिए टाईप बड़ा रखा है।

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के विद्यार्थियों को अन्ताक्षरी प्रतियोगिता में विशेष उपयोगी हो एवं अप्रकाशित साहित्य प्रकाश में आवे, इस भावना से इस संक्षिप्त अध्यात्म बारहखड़ी को हम प्रकाशित कर रहे हैं। भविष्य में पूर्ण अध्यात्म बारहखड़ी अर्थ सहित प्रकाशित होगी तो रसिक पाठक इसका विशेष लाभ प्राप्त कर सकेंगे। विद्वत वर्ग, धनिक समाज एवं रसिक पाठक सम्पूर्ण अध्यात्म बारहखड़ी ग्रन्थ को प्रकाशित करेंगे, इस भावना के साथ विराम लेता हूँ।

इसके सम्पादन में श्री सौभाग्यमलजी जैन, सी-१०७, राजेन्द्रमार्ग बापूनगर, जयपुर तथा पण्डित रमेशचन्द शास्त्री, जैन कम्प्यूटर्स, जयपुर का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, अत: उनका मैं कृतज्ञ हूँ। *-ब्र. यशपाल जैन*

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	पृष्ठ
१.	मंगलाचरण	१-४
२.	ॐ	४-५
३.	श्र	५-७
४.	अ	७-११
५.	आ	१२-१३
६.	इ	१४-१५
७.	ई	१५-१६
८.	उ	१६-१८
९.	ऊ	१८
१०.	ऋ, ऌ	१९
११.	ए	२०-२१
१२.	ऐ	२२
१३.	ओ	२३
१४.	औ	२३-२४
१५.	अं,अः	२४-२५
१६.	क	२६-२९
१७.	ख	३०-३१
१८.	ग	३१-३३
१९.	घ	३३-३५
२०.	ङ	३५
२१.	च	३६-३९
२२.	छ	३९-४१
२३.	ज	४२-४५
२४.	झ	४६-४७
२५.	ञ	४७-४८
२६.	ट	४८-४९
२७.	ठ	५०
२८.	ड	५०-५२
२९.	ढ	५२-५५
३०.	ण	५५-५६
३१.	त	५६-६२
३२.	थ	६३-६५
३३.	द	६५-६९
३४.	ध	६९-७१
३५.	न	७१-७६
३६.	प	७६-८१
३७.	फ	८१-८३
३८.	ब	८४-८५
३९.	भ	८५-८७
४०.	म	८८-९३
४१.	य	९४-९५
४२.	र	९५-९७
४३.	ल	९८-१००
४४.	व	१०१-१०३
४५.	श	१०४-१०५
४६.	ष	१०६-१०७
४७.	स	१०७-११०
४८.	ह	१११
४९.	क्ष	११२

महाकवि दौलतरामजी कासलीवाल

दौलतरामजी कासलीवाल बसवा (जयपुर) के रहने वाले थे। इनके पिता आनन्दराम जयपुर रियासत के उच्च-अधिकारी थे। दौलतरामजी का जन्म संवत् १७४९ में आषाढ़ मास की कृष्णपक्ष की चतुर्दशी के दिन हुआ था। इनका जन्म नाम बेगराज था। इनकी प्रारंभ से ही लेखनी में रुचि थी। एकबार इन्हें आगरा जाने का अवसर मिला। वहाँ विभिन्न विद्वानों से मिलने, चर्चा करने एवं अपने आपको साहित्य सृजन में लगाने की प्रेरणा मिली। इनमें कविवर भूधरदास प्रमुख थे।

इन्होंने वहीं पर संवत् १७७७ में सर्वप्रथम पुण्यास्रव कथाकोष की रचना समाप्त की। उस समय उनकी आयु मात्र २८ वर्ष की थी। इसके पश्चात् वे जयपुर राज्य की सेवा में आ गये और इनकी प्रतिभा को देखकर इन्हें जयपुर राज्य का वकील (प्रतिनिधि) बनाकर उदयपुर भेजा गया। दौलतरामजी को अपनी साहित्यिक प्रतिभा को चमकाने का सुअवसर प्राप्त हुआ और फिर एक के पश्चात् दूसरी कृति लिखना प्रारंभ किया। अध्यात्म बारहखडी, श्रेणिक चरित्र, जीवंधर चरित्र, विवेक विलास, त्रेपन क्रिया-कोष जैसी रचनाएँ लिखकर उन्होंने एक कीर्तिमान स्थापित किया। पश्चात् जयपुर में आये तथा पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, आदि पुराण ग्रंथों को हिन्दी गद्य में लिखकर समस्त जैन जगत की लोकप्रियता प्राप्त की। महापण्डित टोडरमलजी द्वारा अधूरे छोड़े गये ग्रंथ पुरुषार्थसिद्ध्युपाय की भाषा वचनिका पूरी की। दौलतरामजी ने अपने जीवन में १७ रचनाएँ लिखने का सौभाग्य प्राप्त किया। कवि की सबसे बड़ी विशेषता थी कि उनका जीवन पूर्णत: साहित्यिक था। किसी की निन्दा अथवा प्रशंसा करना, सामाजिक झगड़ों में पड़ना, भट्टारकों के विरोध में बोलना आदि से वे बहुत दूर रहते थे।

दौलतरामजी के पुत्रों में से एक पुत्र जोधराज कासलीवाल कामां में रहते थे और वहीं रहते हुए सुखविलास नामक एक बृहद् संग्रहग्रन्थ की रचना की थी। महाकवि का निधन सवंत् १८२९ के पश्चात् किसी समय हुआ था। महाकवि पर समस्त जैन समाज को गर्व है।

अध्यात्म बारहखड़ी : परिचय

'अध्यात्म बारहखड़ी' कवि की अध्यात्मिक कृतियों में सबसे बड़ी रचना है। इसमें स्वर एवं व्यंजन के माध्यम से अध्यात्म विषय का वर्णन किया गया है। स्वयं कवि ने इसका अध्यात्म बारहखड़ी नाम देकर इसके विषय को स्पष्ट किया है। एक प्रकार से वह अध्यात्म विषय का कोश ग्रन्थ है, जिसका प्रत्येक वर्णन भक्ति एवं अध्यात्म रस से ओत-प्रोत है। कवि ने इसमें अपने पूरे ज्ञान को ही जैसे उडेल कर रख दिया है। इस ग्रन्थ में तीर्थंकरों की विविध रूप में स्तुति मिलेगी। सहस्रनाम, शतनाम जैसी अनेक रचनाएँ इसमें समायी हुई हैं। इस कृति का दूसरा नाम "भक्त्यक्षरमालिका बावनी स्तवन" भी दिया हुआ है। अध्यात्म बारहखड़ी इसका अलग नाम है– जैसा कि कवि ने कृति की प्रत्येक पुष्पिका में उल्लेख किया है।

कवि ने अपनी इस पूरी कृति को ८ परिच्छेदों में निम्नप्रकार विभक्त किया है–

प्रथम परिच्छेद : इसमें ओंकार प्रणव महिमा एवं अकाराक्षर से प्रारम्भ होने वाले पद्य हैं। सर्व प्रथम ५ संस्कृत पद्यों में मंगलाचरण किया गया है। इसके पश्चात् ९६ दोहा एवं नाराच छंदों में प्रणवमहिमा, २६ चौपाई छन्दों में ओंकार महिमा एवं ११२, दोहा-चौपाई, छंद बेसरी में अकार का वर्णन किया गया है। प्रथम परिच्छेद की पुष्पिका निम्नप्रकार है– "इति श्री भक्त्यक्षरमालिका बावनी स्तवन अध्यात्म बारहखड़ी नामध्येय उपासकातंत्रे जिनसहस्रनाम एकाक्षरीनाम-मालादि अनेक ग्रंथानुसारेण भगवद् भजनानांधिकारे आनंदराम सुत दौलतरामेन अल्पबुद्धिना उपायनीकृते प्रथम स्तुति प्रारंभद्वारेण प्रणवमहिमापूर्वक अकार-मिश्राक्षर प्ररूपको नाम प्रथम-परिच्छेद ॥१॥

द्वितीय परिच्छेद : इसमें अकार से लेकर अ:कार के १६ स्वरान्त पद्यों में भगवद्भक्ति एवं अध्यात्म की गंगा बहायी है।

इन स्वरान्त पद्यों की संख्या निम्नप्रकार है:–

१. अकरान्त पद्य	४४२	२. आकारान्त पद्य	१३५
३. इकारान्त पद्य	९६	४. ईकारान्त पद्य	३५
५. उकारान्त पद्य	१६०	६. ऊकारान्त पद्य	४४
७. ऋकारान्त पद्य	१४४	८. ॠकारान्त पद्य	१५
९. लृकारान्त पद्य	१६	१०. ॡकारान्त पद्य	११
११. एकारान्त पद्य	१९०	१२. ऐकारान्त पद्य	५०
१३. ओकारान्त पद्य	२४	१४. औकारान्त पद्य	२५
१५. अंकारान्त पद्य	७२	३२. अ:कारान्त पद्य	१२

इसप्रकार स्वरान्त पदों की कुल संख्या१४७१ है। जिन छन्दों का इस परिच्छेद में प्रयोग हुआ है, उनमें दोहा, चौपाई, चौपया, सवैया, कवित्त, छन्द गीता, भुजंगीप्रयात, त्रोटक, सवैया इकतीसा, छन्द मोतीराम, पद्धड़ी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। कवि ने कथाओं के माध्यम से भी जिन महिमा का वर्णन किया है। इकरान्त पद्यों के अन्त में कवि ने अपने पुत्रों के नाम गिनाये हैं। ऋकार से पहिले जिनवाणी का स्तवन और फिर षट्ऋतुओं का वर्णन मिलता है। सभी वर्णन विस्तृत एवं स्पष्ट हैं एवं कवि की विद्वत्ता के द्योतक हैं।

तृतीय परिच्छेद : यह परिच्छेद कवर्ग का है। जिसमें ककार, खकार, गकार, घकार एवं ङकरान्त पद्यों को दिया गया है। इन परिच्छेदों में ककारान्त के २०५, खकारान्त के ८१, गकारान्त के ११७ घकारान्त के ५९ एवं ङकारान्त के २४ पद्य हैं। प्रारम्भ में वर्णन करने से पूर्व संस्कृत पद्य अलग से दिये गये हैं। गृद्ध के प्रसंग में सीताहरण की कथा दी हुई है।

चतुर्थ परिच्छेद : इसमें चवर्ग के सभी पंचाक्षरान्त पद्य हैं। इनमें चकरान्त के १९०, छकारान्त के ७४, जकारान्त के ३२, झकारान्त के ४२ एवं अकारान्त के २० पद्य हैं। इस प्रकार यह परिच्छेद ३५८ पद्यों में पूर्ण होता है। इनमें झकारान्त में झूंठ की बुराइयों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। इस परिच्छेद का प्रमुख छन्द सवैया एवं सोरठा है।

पंचम परिच्छेद: इसमें टवर्ग के सभी पंचाक्षरान्त पद्य हैं। इनमें टकारान्त के ३७, ठकारान्त के ३५, डकारान्त के ७६, ढकारान्त के २६ एवं णकारान्त के ४३ पद्य हैं। इस परिच्छेद में सब मिलाकर २१७ पद्य हैं।

षष्ठम परिच्छेद: इसमें तवर्ग के पद्य दिये गये हैं। जिसमें तकारान्त के १७३, थकारान्त १३६, दकारान्त के ३४९, धकारान्त के ७६ एवं नकारान्त के १२६ पद्य हैं। सब मिलाकर हिन्दी पद्यों की संख्या ३३९ है, जो एक सतसई के रूप में हैं। इस परिच्छेद में त्रेपन क्रिया, अष्ट मूलगुण, द्वादश व्रत, निश्चय व्यवहार नय, गुणस्थान, पांच ज्ञान आदि पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। इस परिच्छेद का प्रमुख छन्द दोहा, चौपाई एवं सोरठा हैं।

सप्तम परिच्छेद: इस वर्ग में पवर्ग पर आधारित पद्य हैं। इनमें पकारान्त के ३३८, फकारान्त के ७०, बकारान्त के २७, भकारान्त के १३७ एवं मकारान्त के १८६ पद्य हैं तथा कुल पद्यों की संख्या ८५८ है। कुण्डलिया, छांघय, सोरठा, शार्दूलविक्रीडित जैसे छन्दों का भी प्रयोग किया गया है। सभी वर्णन सरस, सरल एवं प्रवाहमय है। अलंकारिक शब्दों का भी यत्र-तत्र प्रयोग हुआ है।

अष्टम परिच्छेद: अध्यात्म बारहखडी का यह अन्तिम परिच्छेद है। जिसमें यकारान्त पद्यों की संख्या ११८, रकान्त ९३, लकारान्त ८६, वकारान्त ११३, शकारान्त १३३, षकारान्त १२९, सकारान्त ४५२ हकारान्त ६३ एवं क्षकारान्त के ८१ पद्य हैं। इसप्रकार इस परिच्छेद की कुल संख्या १२६८ पद्य हैं जो सबसे अधिक हैं। इसमें आध्यात्मिक वर्णन अपेक्षाकृत अधिक है। दोहा-चौपाई जैसे छन्दों के अतिरिक्त उपेन्द्रवज्रा, सवैया, कुण्डलिया, सोरठा आदि इस परिच्छेद के छन्द हैं। इसतरह अध्यात्मबारहखड़ी के कुल पद्य ५२३६ हैं।

अध्यात्म बारहखडी काव्यत्व की अपेक्षा से एक अच्छी कृति है। यह एक कोश ग्रन्थ है, जिसकी रचना जिनसहस्र नाम नाममाला आदि अनेक कोश ग्रन्थ एवं आध्यात्मिक ग्रन्थों के आधार पर की गई है। हिन्दी भाषा में इस प्रकार की बहुत कम कृतियाँ देखने में आती हैं।

– महाकवि दौलतरामजी कासलीवाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व से साभार

ॐ

पण्डित दौलतरामजी कासलीवाल विरचित

अध्यात्म बारह-खड़ी

श्लोक

वंदे ज्ञानात्मकं धीरं, वीरं गंभीर-शासनं।
भक्तिदं भुक्ति-मुक्तीशं, योगिनं कर्मदूरगं।।

गुरुन्महामुनीन्नत्वा, दृष्ट्वानेकांत-पद्धतिं।
नत्वा जित्वा हि पद्मे च, वक्षे नामावली प्रभो।।

दोहा

वंदौ आदि अनादि कौं, जो युगादि जगदीश।
कर्मदलन खलबल-हरन, तारन तरन अधीश।।

केवलज्ञानानंदमय, परमानंद-स्वभाव।
गुण अनंत अतिनाम जो, शक्ति अनंत प्रभाव।।

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध जो, अति समृद्ध अवनीश।
ऋद्धि-सिद्धि धर वृद्धि कर, ईश्वर परम मुनीश।।

शक्ति-व्यक्ति धर मुक्ति कर, सदा ज्ञप्ति धर संत।
वीतराग सर्वज्ञ जो, सो श्रीधर भगवंत।।

केवलराम अनाम जो, रमि जु रह्यो सब माहि।
ऐसी ठौर न देखिए, जहाँ देव वह नाहि।।

केवलरूप अनूप कौं, हरहरिगणप दिनेश।
अतुल शक्ति मुनिवर कहैं, सो विधि बुध जिनेश।।

बंधन-हर हर नाम धर, हरी पराक्रम रूप।
तम-हर दिनकर देव जो, गणनायक जगभूप।।

शक्ति अनंतानंत जो, अतुल शक्ति गुणधाम।
विधि कर्ता सुविरंचि जो, प्रतिबोधक बुध नाम।।

मदनजीत जगजीत जो, जिनवर जगत निधान।
रम्यरमण अभिराम जो, ज्ञानवान भगवान।।

परमाल्हादक चंद जो, सुरपति क्षेत्राधीश।
नरपति अखिल प्रपाल जो, आदि पुरुष आदीश।।

संत महंत अनंत जो, रमाकंत भगवंत।
अरि रागादि निहंत को, अंत रहित अरिहंत।।

रमैं शुद्ध चिद्रूप में, शुद्ध चेतना जोय।
कमला-विमला जो रमा, शक्ति प्रभु की सोय।।

ईश निरीश अनीश जो, धीश अधीश मुनीश।
जगत शिरोमणि सिद्ध जो, श्री जगपति अवनीश।।

आतमराम अकाम जो, कामरूप निर्नाम।
रामदेव मनराम जो, सुंदर सरस विराम।।

अखिल वेद विद्वान जो, अति उज्ज्वल परभाव।
महाराज द्विजराज जो, शुक्लरूप भव नाव।।

क्षतिपालक भय टाल को, शरणागत प्रतिपाल।
धनुरद्धर धरणी-धरो, क्षत्री कहियत लाल।।

तुलाधार अविकार जो, सुवरण रूप प्रशस्त।
ज्ञान तुला में तोलिया, लोकालोक समस्त।।

शर्मा वर्मा गुप्त जो, समिति गुप्ति धर धीर।
दासनि कौ आधार जो, महाव्रती अतिवीर।।

सुश्रुषा प्रतिभास जो, अखिल कर्म ज्ञातार।
शूद्रनि हूं कौ नाथ जो, स्याम सकल दातार।।

शुक्ल रक्त अति पीत जो, सुवरण वरण विशाल।
हर्यो भर्यो घनस्याम जो, रहित स्यामता लाल।।

अवरण वरण कृपाल जो, रूप-अरूपी नाथ।
मूरतीवंत अमूरती, जाकै निजगुण साथ।।

व्रती ब्रह्मचारी सदा , तिष्ठै घट-घर माहिं।
अति गृहस्थ प्रभु स्वस्थ जो, यामें संशय नाहिं।।

वन-विहारी निरधार जो, वानप्रस्थ हूँ नाम।
जिती जितेन्द्री धीर जो, महावीर गुणधाम।।

पातक सकल निपात को, मायाचार निपात।
अविनश्वर अनिपात जो, सो श्री पति श्री पात।।

दंडै मन-इंद्री सबैं, खंडै विषय-विकार।
मंडै ज्ञान-विराग जो, सो दण्डी अविकार।।

त्रिविध कर्म दंडै प्रभु, नाम त्रिदंडी सोइ।
चंडी प्रकृति धरै महा, मायारूप न होइ।।

हंसनि कौ आधार जो, परमहंस जगभूप।
हिंसा कर्म निवार को, धर्म अहिंसा रूप।।

भयटारक भट्टारको, भवतारक भ्रम-दूर।
कारक परम समाधि को, सकल उपाधि प्रचूर।।

श्रीगुरू सूरि अध्यापको, उपाध्याय गुण-पूर।
उपन्यास निज पास को, रागादिक चक चूर।।

शमी दमी प्रभु संयमी, साधु अबाध सुजान।
ऋषि मुनि यति श्री पूज्य जो, अनागार भगवान।।

आचारिज आरिज प्रभू, अति संविग्न कृपाल।
संवेगी निर्वेद जो, जैनधर्म प्रतिपाल।।

निराभर्ण जगभूषणो, दिगपट दीनदयाल।
प्रभू दिगम्बर देव जो, थिरचर कौ रछपाल।।

योगी योगारूढ़ जो, जंगम थावर ईश।
यती तपोधन श्रुति धरो, संन्यासी जगदीश।।

आगे प्रणव स्वरूप भगवान को नमस्कार करि अध्यात्म बारहखड़ी आरंभिये हैं—

श्लोक

ॐकारं परमं देवं, ज्ञानानंदमयं विभुं।
परात्परतरं शुद्धं, बुद्धं वंदे स्वरूपिणं।।

चौपाई

ॐकार परम रस रूप, ॐकार सकल जगभूप।
ॐकार अखिल मत सार, ॐकार निखिल तत धार।।

ॐकार सबैं जप मूल, ॐकार भवोदधि कूल।
ॐकारमयी जगदीस, ॐकार सुअक्षर सीस।।

ॐ दरसी श्री भगवंत, ॐ परसी मुनीवर संत।
ॐ उपाध्याय श्री पति स्वामी, ॐ ज्ञायक अतंरजामी।।

ॐ भासक श्री जिनदेव, ॐ विथरित गणधर देव।
ॐकार जिनागम सार, ॐ धारण मुनिवर धार।।

ॐकार महा अघ नास, ॐकार सकल श्रुतिभास।
ॐभेद न जाने मूढ़, ॐकार परम पद गूढ़।।

बेसरी

ॐ सम को मंत्र जु नाही, पंच परम पद याके माहीं।
ॐ मंत्र जु भगवत रूपा, ॐ श्रुति संसृति को भूपा।।

ॐ अक्षर सीस विराजैं, ॐ मय जिनवर धुनि गाजै।
इह एकाक्षर मंत्र जु भाई, मेटि जु भव थिति शिवहुँ मिलाई।।

ॐ श्वेत वर्ण जे ध्यावै, लय धरि चित्त न कहूं बहावे।
ते पावे निज शुद्ध स्वरूपा, ब्रह्म बीज हैं प्रणव अनूपा।।

।। इति प्रणव स्तुति।।

आगे श्र अक्षर श्रीकार है, ताको कहे है—

श्लोक

श्रमणं श्राद्ध-निस्तारं, श्रियोपेतं च श्रीधरं।
श्रुतीशं श्रूयमाणं च, श्रेयं पूजं यशस्करं।।

स्रग्धरा

श्रांत भयो वन भवन विषैं, नहि पाई विश्रांति।
दे विश्राम दयाल तू, शांत रूप अति क्रांति।।

श्रावण भाद्रपदादि में, चातुर्मासिक व्रत।
धारैं तेरे दास प्रभु, तो करि व्रत प्रव्रत।।

श्रियोपेत स्वामी परम, तू हि श्रियंकर नाथ।
श्रिष्टि तजैं स्रष्टा भजैं, तब पावैं मुनि साथ।।

श्रित जु अनेक उधारिया, श्रित वत्सल तू देव।
मोहू करी श्रित आपुनौ, देहु निरंतर सेव।।

श्रीधर श्रीवर देव तू, श्री निवास श्री पात।
श्री विलास श्री राम तू, श्री जिन श्रीपति ख्यात।।

श्री श्रित पादांबुज प्रभू, श्री प्रधान श्री मान।
श्री तेरी अनुभूति है, निज विभूति भगवान।।

श्री नहिं तोतैं भिन्न है, तू नहिं श्री तैं भिन्न।
श्री स्वभाव पर्याय है, तू है द्रव्य अभिन्न।।

श्री अनन्त भरपूर तू, बहिरंगा तैं दूर।
बहिरंगा है नश्वरी, जग माया भक भूर।।

श्री तेरी अविनश्वरी, श्री नहिं त्रिय की जात।
तू पुरुषोत्तम पुरुष नहिं, पूरण परम उदात।।

बेसरी

श्रुत परसाद सुकेवल लैकें, आवैं तुव पुरि जग जल दैकें।
तेरो रहसि लहैं जब देवा, गहैं आपुनौ रूप अभेवा।।

श्रुति-धारत श्रुति-कारक देवा, श्रुति-पारग श्रुति-मारग सेवा।
श्रुति-सागर श्रुति-आगर नामी, श्रुति-नायक श्रुति-दायकस्वामी।।

श्रूयमाण जस तेरौ स्वामी, भव जल पार करै शिवधामी।।
तेरौ श्रुत अमृत जगराया, पीवै ते ह्वै अमरन काया।

श्रेणि जु कहिये पंकति नामा, गुण पंकति तौ में अभिरामा।
उपशम श्रेणी क्षपक जु श्रेणी, तूहि प्रकासै मुक्ति निसैनी।।

श्रोता तेरे तिरे अपारा, तू वक्ता तारै संसारा।
श्रोत्रिय विप्रगण बहु तारे, क्षत्रिगण बहुतैं ही उधारैं।।

श्रोणित आमिस अस्थि अलीना, इनहि भखे तैं होहि मलीना
श्रोणित रुधिर तनौं है नामा, तेरे रुधिर न अस्थि न चामा।।

श्रौत धर्म तैं विमुख विमूढ़ा, श्रौता भासा धरैं मत रूढ़ा।
तेरी भक्ति न उर में आनैं, करुणा रहित कर्म बहु ठानै।।

श्र्यंक देव तू ही श्री अंका, तो बिनु और सबै जग रंका।
ते बूडैं भव सागर मांही, तो बिनु धर्म रीति कहूँ नाहीं।।

श्रृंग जु गिर कै चढ़ि मुनि ध्यानी, धरैं जे तेरौ ध्यान अमानी।
ते जग श्रृंग तत्त्व तुव पावैं, लोक श्रृंग चढ़ि तुव पुरि आवैं।।

।।इति श्री श्र अक्षर संपूर्ण।।

आगे अकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

अनादि-निधनं वंदे, स्वधनं धन-दायकं।
सुभतं लक्षणोपेतं, अमरामरमीश्वरं।।

सोरठा

अ कहिये श्रुति माँहि, हरिहर कौ इह नाम है।
तो बिनु दूजौ नाहिं, हरिहर जिनवर देव तू।।

बेसरी

अणीयांन अणु हू तैं स्वामी, महियान नभ हू तैं नामी।
अमल अनूपम प्रभु चिद्रूपा, अकल अरूप प्रभु सद्रूपा।।

अचल अमूरत अमृत कूपा, अतुल अनंत सुमूरत रूपा।
अध्यातम अति सुद्ध स्वरूपा, अनुभव रूपी तत्त्व प्ररूपा।।

अति अनंत गति देव अजीता, भव संतान अनंत विजीता।
अर्द्ध मात्र नाहीं अर कोई, अति निरवैरी अति छति होई।।

अतुल पराक्रम धारी राया, अमन अतिंद्री ज्ञान सुभाया।
अति अनंत सुखपिंड अखंडा, अर अपिंड परचंड अदंडा।।

अपर प्रकाश अनंत विलोकी, लोकालोक लखै अवलोकी।
अचल लब्धि कौ तू ही ईशा, प्रभू अयोनी संभव धीशा।।

अकषाई तू अतिहि पुनीता, अनगारा ध्यावैं सुविनीता।
दान अनंत-अनंत सुलाभा, भोग अनंत अनंत महाभा।।

अति अनंत उपभोगा तेरै, अति अनंत वीरज प्रभु नेरै।
असम महासम स्वामी तूही, तूरी समता तूहि प्रभू ही।।

अति अनंत विकल्प हरि मेरे, ह्वै अविकलप भजौं पद तेरे।
संकलपा अर सकल विकलपा, तेरै एक न तूहि अकलपा।।

अवनी-पति तू परम अतीता, अलख अलेसी देव-प्रतीता।
सुख जु अतिंद्री देहु सु मोकौं, धोकौं द्रव्य भाव करि तोकौं।।

अजर-अमर अन-अतिथि-रूपा, अचर अचार अकर अतिभूपा।
अटल विहारी सकल विहारा, अविहारी कितहू न विहारा।।

अर्थ न एक अनर्थी तूही, तू हि सु अर्थी अर्थ समूही।
अर्थ सकल ए जग के झूठे, तेरै अर्थि जती जग रूठे।।

अद्भुत देव तिहारी सोभा, तुम अधिके सब तैं बिन क्षोभा।
अभू स्वभू परमेश्वर तू ही, विभू-प्रभू तू सर्व समूही।।

अनुभव देहु मोहि सुख रासी, तू अनुभूति स्वरूप विभासी।
अति संगी तू देव असंगा, अति रंगी तू नाथ अरंगा।।

अति अधर्म नासैं तुव नामें, नसैं अकर्म बहुरि नहिं जामें।
अति धर्मी तू धर्म स्वरूपा, अवनी अधिक क्षमा धर भूपा।।

अप तैं अधिक अमल तू राया, अनुभव अमृत रूप सुभाया।
अधिक अनल तैं तेज अनंता, अनिल-अधिक बल चिदघन संता।।

अनृत अदत्त असील निवारा, अबला रहित अकिंचन धारा।
अदया भाव न तैरै होई, नहीं असत्य कहै तू कोई।।

अमरण अकरण थिर चर पाला, अक्षय अव्यय अति अघ टाला।
अजित महा अभिनंदन देवा, अमर अमरपति धारहि सेवा।।

अक्रोधी अभिमान वितीता, अभव अनारज भाव अतीता।
असत अमत अंतनि तैं न्यारा, अति शुचि अति पवित्र सुप्यारा।।

अपवित्र न पावैं प्रभु सेवा, नहिं असंयम रूप सुदेवा।
अति-तप अति-त्यागी अति-भागी, भजैं अकिंचन साधु विरागी।।

अति सुशील अति ही सुखदाई, नहि अनीति अरीति न भाई।
अविनय अनय तजैं ए जीवा, तब तोकौं पावैं सुख पीवा।।

अर्कपती अमरेश्वर गावैं, अहमिंद्रा पूजैं मुनि ध्यावैं।
नहिं अविद्या तेरै कोई, ब्रह्म सुविद्या दै सुखदाई।।

अतिहि अमल केवल अवबोधा, अखिल स्वभावमई प्रतिबोधा।
अखिल सुचक्री अर्द्ध जु चक्री, तोहि जु पूजैं तू अति चक्री।।

मोतियादाम

अलेष अभेष अलक्ष अपक्ष, अशेष विशेष अनक्ष-प्रत्यक्ष।
अशून्य अपुन्य अपाप अताप, सुशून्य सुपुण्य अशाख अचाप।।

छप्पय

अहो अहो कर भास, मोहि तिमर जु कौ हंता।
ममता रजनी मेटि, बोध दिवस जु प्रगटंता।।
भव्य कमल प्रतिफुल्ल, करन जो पंथ चलावै।
विषय विनोद मिटाय, नादि सूतेहि जगावै।।
जीव सुचकवो सुमति चकई, विषम विरह तिनकौ हरै।
अभवि उलूक लहैं न दरसन, अर्क अमित दूति तू धरै।।

अतुल अनंत प्रताप, ताप नहि तेरै सबही।
मिथ्या भाव सुराह, तोहि बेढ़ै नहि कबही।।

रवि को नाम जु मित्र, जु है सांचौ मित्रा।
अर्क नहीं तो तुल्य, पूज अति रस्मि विचित्रा।।
अवगम नाम सुज्ञान कौ, अन्हि नाम दिन कौ सही।
अन्हिकरण अवगम मई तू, अरूण अहोकर कौ तुही।।

असु प्राणनि कौं नाम, तुहि प्राणनि कौ त्राता।
असुभृत प्राणी जीव, पीव तू जीवनि दाता।।
तेरै प्राण न कोई, ज्ञान आनंद जु प्राणा।
सुख सत्ता अवबोध, शुद्ध चैतन्य सुजाणा।।
अवधि शुद्ध ताकी जु तूही, अवधि न अवधि तो विषैं।
हरहु अविद्या दे सुविद्या, अति सुगमक तू श्रुति लिखे।।

दोहा

अतिहि अनातं को प्रभू, अभय अभव भावेस।
विभू अनादेसो तूही, सदादेश आदेश।।

अनिर्मान भगवान तू, अति निरवान जु होई।
तेरौ निर्मापक नहीं, कर्ता जग में कोई।।

अर्द्ध चक्रि तोकौं रटैं, रटैं कामदेवादि।
हलधर तेरौ जस कहैं, गावैं तोहि अनादि।।

कवित्त

अध्यातम धारिनि कौ तारक, असुधारिनि कौ है प्रतिपार,
इह अद्भुत गति देखहु तापैं, सो अध्यातम धार सुसार।
आप अनघ अवसेस नाहिं को, कर्मनि कौ जा माहिं लगार;
सबसे नाते रहित जु स्वामी, सेनाधर सेवें दरबार।।

सोरठा

अध्यातम कौ मूल, भजैं तोहि अध्यात्मी।
मेट हमारी भूल, दे आतम अनुभव सही।।

दोहा

अर देवासुर जाति जे, तेऊ गर्भज नाहिं।
देव जौनि सुरमात है, इह भाख्यो श्रुति माहिं।।

अर्द्ध चक्रि तोकौं रटैं, रटैं कामदेवादि।
हलधर तेरौ जस कहैं, गावैं तोहि अनादि।।

अष्टमि तैं पूण्यौं सुधी, इहै अठाई होय।
तूहि प्रकासै नाथ जी, सिद्ध गुननि परि सोय।।

बेसरी

अब निज वास देहु जगराया, मेटि भरमन मूल जु माया।
कोढ़ रूप इह काम विकारा, सो मेरौ मेटो भव-तारा।।

चाल

अद्भुत राजा तू जोगी, नहि जोग एक प्रतिभोगी।
भोगा नहि इंद्री विषया, आनंद भोग श्रुति लिखिया।।
तोहि तैं जानहि भव्या, पावैं नहिं जाहिं अभव्या।
तू प्राज्ञः प्रज्ञाधारी, पाखंड निवारै भारी।।

त्रिभंगी

अति अमृत भाख अवाचतु ही, तत भासक नाथ अगाध सही।
अविभाग अखंडित शुद्ध तु ही, अति भार धुरंधर आप सही।।

दोहा

आयौ तेरै द्वार अब, स्वामी करि जु निहाल।
गुण अनंत सब द्याय तूं, सरनागत प्रतिपाल।।

सोरठा

अब दै भगति दयाल, भव संकट हरिनाथ जी।
भगति वछल तू लाल, भगत करैं भगवंत जी।।

।। इति अकार स्वर संपूर्णम् ।।

आगे आकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

आदिदेवं युगाधारं, आत्माराम-पितामहम्।
वंदे साकार-रूपं च, निराकारं निरंजनम्।।

सोरठा

आ कहिए श्रुत माहिं, नाम पितामह कौ सही।
तौ बिनु दूजौ नाहिं, तू ही लोक पितामह।।

आशु शीघ्र कौ नाम, शीघ्र उधारौ जगत तैं।
आवश्यक दै राम, समता वंदन आदि सहु।।

आलय घर कौ नाम, तेरै घर घरणी नहीं।
सब घट तेरे धाम, तू आलय सब कौ सही।।

आस्पद कहिये थान, तेरै थान न आन कौ।
स्व स्वभाव भगवान, लोक सिखर राजै तुही।।

छंद

आदि धुरंधर आदि जगत गुर, आदि सकल तू ही।
आदिनाथ आदीश्वर स्वामी, आदि सुदेव प्रभू ही।।

आधि न व्याधि रोग रागादि के, मोहादिक कछु नाहा।
हरै आपदा जीव राशि की, नहिं आताप कहाँ ही।।

आलस नहिं आलंब न कोई, है आलंबन सबका।
आप्त नाम आवरण वितीता, आतम गुणधर ढ़बका।।

चौपाई

आखंडल सेवै तुव पाय, इंद्रनि कौ पति तू मुनिराय।
प्रभु आदीस आदि जोगीस, आचारिज प्रणमें नमि सीस।।

आदि अविद्या भेदै तूहि, आदि मनोहर रूप समूही।
आतम बोध प्रदायक देव, घाति कर्म टारै जु अछेव।।

गाथा

आशापासि निकंदा, संतोषी तु महा सुखी धीरा।
आनंदा जिनचंदा, करि आनंदी महावीरा।।

आसा पूरै सबकी, तैरे आस न तू ही निहकामी।
आस पिशाची कबकी, मोहि लगी टारि जगस्वामी।।

आसा राखैं तेरी, धरौं न आसा कदापि घर-घर की।
करि ऐसी बुद्धि मेरी, करूना पालौं ही थिर चर की।।

आसा मेटि हमारी, करौ न आसा कदापि सुर-नर की।
सुनिकैं वानि तिहारी, परनति जानीहि निजपर की।।

आरति हरण तू ही, आपद हरण सुसंपदा दाता।
संपति गुण जु समूही, भक्ति तेरी सु विख्याता।।

आदेशा इह तेरा, जीवा सब आप तुल्य करि जानौं।
परधन पाहन ढेरा, परनारी मात सम मानौं।।

गीता

आजि धन्य सुधन्य भागा, आस्था तेरी गही।
आसक्तता परभाव केरी, हरौ देव भयहर तुही।।

आदि दौलत रावरै ही, तोहि तैं दौलत लहैं।
भुक्ति मुक्ति सुमूल तू ही, चरन शरण तेरी गहैं।।

।। इति आकराक्षर संपूर्ण।।

आगे इकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

इंद्र-नागेन्द्र चक्रीणामीश्वरं जगदीश्वरं।
वंदे सर्व विभूतिनां, दायकं मुक्ति-नायकं।।

दोहा

इंदीवर कहिये कमल, कमल कहा कमनीय।
जैसें तेरे चरन हैं, तू अनन्त रमनीय।।

इंद्रपती अर इंदुपति, इंदु कहावै चंद।
चंद चकोर जु ह्वै रहै, निरखत वदन मुनिंद।।

इभ हस्ती कौ नाम है, इभ न लहै वह चाल।
हंस चाल गज चाल तैं, जाकी चाल विशाल।।

इंद्र तीन हू लोक कौ, इंद्र हू कौ प्रभु इंद्र।
इंद्राणी अर इन्द्र कौ, जीवन मूल मुनिन्द्र।।

इखु यह नाम सु बान कौ, जाकै बान न चाप।
ज्ञान-चाप व्रत बान धर, नासै अखिल जु पाप।।

इंद्रीजीत अभीत जो, इष्ट सबनि कौ वीर।
इष्टानिष्ट न भाव धर, ताहि ध्याय मन धीर।।

इष्ट वस्तु-दायक प्रभु, इष्टादिष्ट स्वभाव।
इंद्री विषय वितीत जो, इला नाथ भव नाव।।

इला भूमि कौ नाम है, नाम इंदिरा भूति।
इला इंदिरा कौ धनी, धरै अनंत विभूति।।

इंडा पिंगला सुषमना, नारी तीन जु होय।
रहै सुषमना लागि कैं, रहै तोहि सुख सोय।।

इंद्र धनुष जल बुद- बुदा, तड़ित तुल्य संसार।
यामें सार लगार नहिं, तात जगत में सार।।

पद्धरी

इह कलियकाल माहैं जु मूढ़, तुव तत्त्व त्याग सेवैं हि रूढ।
कणरूप तूहि तुष मिलत और, कण गहहि साधु करि कर्म चौर।।

सोरठा

इहै तमासौ नाथ, जड़ नै जीव जु बांधीया।
जब छूटैं बड़-हाथ, तूहि छुड़ावैं करि कृपा।।

त्रोटक छंद

इह तस्कर मोह जु ज्ञान हरै, तुव दासनि तैं इह चोर डरैं।
प्रभु मोह हरै तुहि ज्ञान सु दे, नहिं ज्ञान थकी भव भ्रांति कदे।।

दोहा

इह मांगौ और न चहू, देहु कृपाकर ईश।
अंतकाल बिसरौ नहीं, चरन कमल जगदीस।।

।। इति इकाराक्षर संपूर्ण।।

आगे ईकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

ईकाराक्षर-कर्तारं, ईश्वरं जगदीश्वरं।
धीश्वरं धिषणाधीशं, ईशं वंदे मुनीश्वरं।।

दोहा

ई कहियै आगम विषैं, है लक्ष्मी कौ नाम।
लक्ष्मी तेरी शक्ति है, चिद्रूपा गुण-धाम।।

ईठ नाम है मित्र कौ, भाषा में सक नाहिं।
मित्र न तो सौ दूसरौ, तीन लोक के माहिं।।

ईख रसादि मिष्ट नाहिं, मिष्ट इष्ट तुव नाम।
नाम रसायन जे पीवैं, अमर हौंहि अभिराम।।

ईस वल्लभा ईश अर, तोकौं ध्यावैं नाथ।
तू ईशेश अलेश है, गुण अनंत तुव साथ।।

ईश्वर समरथ नाम है, तोसौं समरथ कौन।
तातैं तूहि महेस है, भनैं मुनि गहि मौंन।।

ईति भीति सब दूरि ह्वै, लेत तिहारौ नाम।
डरे दास के दास सौं, भय भाजै तजि ठाम।।

।।इति ईकाराक्षर संपूर्ण।।

आगे उकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

उकाराक्षरं महादेवं, शंकरं भुवन-त्रये।
वंदे सदाशिवाधीशं, नित्यमानंद-मंदिरं।।

दोहा

उत्तम उर तेजस महा, आनंदी जु उदास।
उरि वसि नाथ सुदास कै, अह-निशि सास-उसास।।

उच्चिष्टा विषया सबै, इंद्रिनि के परपंच।
भुगते जग वासीनि नैं, नहि चाहौं अघ संच।।

उभय नाम है दोय कौ, राग दोष ए दोय।
मेटि दोय दै दास कौं, दरसन-ज्ञान सुजोय।।

उपशम क्षपक जु श्रेणि है, सब भासै तू देव।
तू उतंग अभंग है, बिन उनमाद अछेव।।

उज्झित जग जंजाल तैं, उतकंठा तैं दूर।
उतकंठा मेरी हरौ, दै सेवा भरिपूर।।

उछेदक जग फंद तू, हरि मेरे उन्माद।
उणमणि मुद्रा दास कौ, दे जोगि अविवाद।।

उनमान जु तेरौ नहीं, उनमत्तता नहीं नाथ।
तू उनमत्त स्वभाव में, रमैं रमा के साथ।।

उल्लाला तम इह जगत, या सम और न सिंधु।
उपरि जगत कै तू सही, काटि हमारे बंध।।

उच्च महा उतकिष्ट तू, जपैं उमापति तोहि।
उपसर्गा सब दूरि ह्वै, तो तैं सब सुख होहि।।

उत्सर्गी उत्सर्गमय, इहै त्याग कौ नाम।
तू त्यागी संसार कौ, उपशांती अभिराम।।

पद्धरी

उपवास देहु निजवास देव, अति है सु उजागर अतुल भेव।
उदितोदित तात उपाधि चूरि, मुनि उपाध्याय ध्यावैं सु सूरि।।

उदईक विभाव गहै न तोहि, उन्मीलित प्रगटित तूहि होहि।
उतकिष्टा-दुतकिष्ट जु असाथ, तेरी सुउपास न देहु नाथ।।

उल्लास विलास अपार देव, तू परम उपास्य अनंत भेव।
तू है न उपासक शुद्ध तत्त्व, सब तोहि उपासै अतुल सत्त्व।।

उपाहास न तेरे हितु असंग, प्रभु उर अंतर भासै अभंग।
उद्योतमान अति उदयवान, उद्वेग वितीत अनंतज्ञान।।

उतकौं इतकौं न फिरै हि तूहि, तू है सु उतारक भव समूहि।
उतश्रृंखल भाव न एक पासि, तू उतश्रृंखल स्वामी अपासि।।

उतपल दल लोचन अति विसाल, उपचारी तू अति ही रसाल।
उपचार न तो सम और कोय, जर-मरण-जनम मेटै जु सोय।।

उपकर्ण न तेरै कोई होई, उपयोग भाव उपकर्ण सोई।
उर हार तू हि उरझार दूर, तू नाहिं उपद्रित कर्म चूर।।

।। इति उकार संपूर्ण ।।

आगे ऊकार का व्याख्यान करे हैं—

दोहा

ऊ कहिये सिद्धांत में, प्रगट विष्णु को नाम।
सर्व व्यापको विष्णु है, परमज्योति गुण-धाम।।

ऊपरि नीचे दिसि विदिसि, व्यापि रहयो तू देव।
और न चाहे नाथजी, देहु रावरी सेव।।

ऊरध लोक प्रदाय को, ऊरध सबकै तूहि।
ऊर्जित जग मूरध तुही, नहि काहू सौं दूहि।।

ऊषा मांहि जु ऊठिकैं, जपै तिहारो नाम।
अह-निसि मंगल रूप ही, रहै महा विश्राम।।

ऊंघ नींद सब खोयकैं, तजि विषयन कौ साथ।
भजै तोइ सोई जनम, सफल करै जग नाथ।।

ऊहापोह वितीत तू, ऊहा तर्क जु नाम।
तू अवितर्क स्वरूप है, अतुल अर्क निज धाम।।

ऊधिम तेरै कछु नहीं, तू ऊधिम तैं दूरि।
मेरे ऊधिम लागिया, सो हरि करि भरपूर।।

ऊर्ण नाम है मांकरी, उर तैं काढ़ै तार।
आपहि खेलैं तार सौं, बहुरि सिकोचै सार।।

।। इति ऊकार संपूर्ण ।।

आगे ऋवर्ण का वर्णन करे हैं —

श्लोक.

ऋकाराक्षर-कर्त्तारं, धातारं धर्म-शुक्लयो:।
ज्ञातारं सर्व-भावानां, वंदे त्रातारमीश्वरं।।

दोहा

ऋवरण वर्ण जु सूत्र में, देव मात कौ नाम।
देव तुही तेरै नहीं, तात मात धन धाम।।

।।इति त्रकार संपूर्णं।।

आगे ऋवर्ण का वर्णन करे हैं—

श्लोक

ऋकाराक्षर-कर्त्तारं, भेत्तारं कर्म-भूभृतां।
ज्ञातारं विश्व तत्वानां, वंदे देवो सदोदयं।।

।।इति ऋ वर्णनं संपूणम्।।

आगे लृवर्ण का वर्णन करे हैं—

श्लोक

लृकाराक्षर-कर्त्तारं, देव-देवाधिपं परं।
पूर्णं पुरातनं शुद्धं, बुद्धं वंदे जगत्प्रियं।।

।। इति लृकार संपूर्णम् ।।

आगे लृकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

लृकाराक्षर-धातारं, दातारं सर्व-संपदा।
नेतारं मोक्षमार्गस्य, वंदे देवं सदोदयं।।

दोहा

लृ कहिये अहि मात कौ, नाम सुग्रंथनि माहिं।
अहि दुर्जन ए कर्म हैं, विष भरिया शक नाहिं।।

इति लृवर्ण संपूणम्।।

आगे एकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

एकं विशुद्धमत्यक्षं, परमानंद-कारणं।
परं परात्परं देवं, वंदे स्वात्म-विभूतिदं।।

दोहा

ए कहिये सिद्धान्त में, नाम महेश्वर-देव।
ए कहिये फुनि विष्णु कौ, तुम ही देव अछेव।।

एक एव जग-देव तू, व्यापक लोकालोक।
तातैं विष्णु अत्रिश्नु तू, जिनवर नित्य अशोक।।

एक महाज्ञानी तुही, एक सुकेवल ज्ञान।
एक मुक्ति-मारग तुही, परमेश्वर भगवान।।

एकीभाव अनेक तू, एक तत्त्व परधान।
सकल तत्त्व भासक तुही, अति अविचल सरधान।।

एक नाथ द्वै भेद तू, त्रिक भेदो चउ-रूप।
पंच भेद-धारक तुही, परम स्वरूप अनूप।।

एक धरम आकास इक, एक अधर्म निरूप।
एक अणू मिलि बहु अणु, बंध होय जड़रूप।।

एक-एक कालाणु वा, सकल असंखि जु होय।
मिलैं न कोई काहू सौं, अमिल शक्ति है सोय।।

एक मूरती पुद्गलौ, और सबै जु अरूप।
जड़-स्वरूप पांचो कहे, जीव रासि चिद्रूप।।

एक रासि संसार की, एक रासि हैं सिद्ध।
देह धरें जगजीव हैं, सिद्ध विदेह प्रसिद्ध।।

बेसरी

एकीभाव न तातैं पायौ, दुविधा धरि निजरूप न भायो।
एक महा अविवेकी मैं ही, जीव होय हार्‌यौ जड़ पै ही।।

एन भेद बहु मुख्य जु हिंसा, पुण्य भेद मुख्य जु अहिंसा।
एण कहावैं मृग पशु जीवा, मृग मारै तैं पाप अतीवा।।

पद्धरी

एकत्व गम्य एकत्व लीन, एकत्व सार शुद्धत्व चीन।
एकांतवास धारैं मुनिंद, ते तोहि एक ध्यावैं जिनंद।।

एकेन्द्रियादि जीवा अनंत, एको दयाल तूही जु कंत।
एतत्स्वरूप भवतारि मोहि, रुद्रा जु एकदश जपहि तोहि।।

एकादशा जु पडिमा सुसार, श्रावक धर्म भासै अपार।
एकाधि बीस लज्जा जु आदि, गुण सर्व तुहि भासै अनादि।।

सोरठा

एकहतरि परि एक, अधिक भयें बहतरि कला।
सकल कला अविवेक, जौ तोकौं ध्यावै नहीं।।

एक्यासी चउरासी, असी पच्चासी लगि रहे।
तेरम ठाण अपासि, जरी जेवरी-सी अबल।।

ए सहु प्रकृती चूरि, पावै तेरौ निज पुरा।
तू है एक प्रभूरि, एकानव भी है सही।।

एकोत्तर सौ पूत, ऋषभदेव के शिव भये।
तो कौं जपैं अवधूत, तू है शिव कारन सही।।

एक टकोरौ धर्म कौ, तेरै बाजै नाथ।
तू धरमी धरमात्मा, धर्म नाथ गुण-साथ।

।' इति एकार सपूर्णम् ।।

आगे ऐकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

ऐकारं परमं देवं, सर्वाक्षर-निरूपकं।
वंदे देवेन्द्र वृंदार्च्चं, परमं पुरूषोतमं।।

दोहा

ऐ कहिये सिद्धान्त में नाम महेश्वर देव।
तुम ही ईश महेश हो, और न दूजौ भेव।।

ऐहिक फल मांगू नहीं, परभव भोग न चाहुं।
निःकामा भक्ति चहुं, तुव भजि कर्म नसाहुं।।

पद्धरी

ऐश्वर्य-मूल ऐश्वर्यदाय, ऐरावताधिपति परहि पाय।
ऐश्वर्य मोह कौ सर्व नासि, भासे सुतत्त्व आनंदरासि।।

सोरठा

ऐरावत पति इन्द्र, तोहि निहारे भक्ति करि।
ध्यावैं सकल मुनिंद, चंद सूर गावैं सबैं।।

ऐसो थूल जु तूही, जामैं सर्व समावहीं।
गुणी गुनाढ्य समूहि, द्रूहि न तेरै कोइ सौ।।

चौपाई

ऐसे हू जग में निज दास, तोहि न भूलहि जगत उदास।
गुणहतरि ऊपरि सौ नरा, बड़े पुरिष अति गुण गण भरा।।

।। इति ऐकार संपूर्ण ।।

आगे ओकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

ओकारं परं देवं, सर्वज्ञं सर्वदर्शनं।
तू हि जु ब्रह्मा हर हरी, और न दूजौ राम।।

दोहा

ओजस्वी अति तेजमय, तू है ओज स्वरूप।
ओज नाम हैं तेज कौ, तेज-पुंज तू भूप।।

ओक नाम घर कौ सही, तेरै घर नहि देह।
लोकालोक बिषैं तुही, व्यापि रह्यो बिनु नेह।।

ओक तिहारौ ज्ञान है, निज क्षेत्रो चिद्रूप।
सर्व ज्ञेय हू ओक हैं, व्यवहारैं जु प्ररूप।।

ओक तिहारे सर्व ही, सब के तुम ही ओक।
ओक तिहारौ लोक कैं, मापै हैं गुण थोक।।

।। इति ओकार संपूर्णं ।।

आगे ओकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

औकाराक्षरं कर्त्तारं, ज्ञानानंदैक-लक्षणं।
सर्वज्ञं सुगतं शुद्धं, बुद्धं वंदे जगत्रयं।।

मंदाक्रांता

औचित्यादि अति गुण भरौ, औपशांती तुही जो।
औदै को जो रहहि न नखैं, तू न कर्मी वही जो।।
तेरे स्वामी रहहि न सही, औपशांती हु भावा।
नाही तेरै क्षय उपशमा, तू ही शुद्ध स्वभावा।।

चौपाई

औपासक श्रुति भासै तूहि, तू न उपासक देव प्रभूहि।
औदासीन्य स्वभाव सुधार, अति आनंद मयी विस्तार।।

औषधरूप तूहि जगदेव, हरै व्याधि जर-मरण अछेव।
औषधीश हैं चंद्र सुनाम, चंद्र सूर ध्यावैं तुहि राम।।

।। इति औकार संपूर्ण ।।

आगे अं का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

अंकारं परमं देवं, शिवं शुद्धं सनातनं।
योगिनं भोगिनं नाथं, वंदे लोकेश्वरं विभुं।।

दोहा

अंक नाम है चिह्न कौ, तेरै चिह्न न कोय।
ज्ञानानंद जु चिह्न है, तू चिद्रूप जु होय।।

अंक नाम अक्षर सही, तू अक्षर अविनासि।
अंह्रिप चरन कौ नाम है, सेवैं सुर नर रासि।।

अंह्रिप कहिये वृक्ष कौं, अद्भुत तरु सुखदाय।
तो सम सुर तरु और नहिं, अति अनंत फल छाय।।

अंशु किरण कौ नाम है, किरण अनंत जु धार।
तू अनंत द्युति देव है, भानुपति अविकार।।

अंतर तेरै कछु नहीं, नित्य निरंतर ईस।
अंतर बाहिर एक रस, अति रसिया अवनीस।।

अंतर उर मेरे सदा, वसि जग जीवन नाथ।
अंत मेटि दयाल तू, देहु आपनो साथ।।

अंतर उर के आय कै, हरौ कुबुद्धि अपार।
दै स्वभक्ति भव तार तू, निराधार आधार।।

बेसरी

अंजन रहित निरंजन देवा, अंतर रहित देहु निज सेवा।
अंजन धोय निरंजन कीनें, बहुत भक्त तारे रस भीनें।।

अंत न आदि न तेरी कोई, तू अनादि अनिधन प्रभु होई।
अंतर भेदी अंतर जामी, अंतर वेदी अंतर स्वामी।।

अंतरात्मा तोहि जु ध्यावैं, बहिरातम तुव भेद न पावैं।
अंतरनाथ अंतर नाथा, अंतर मेटि देहु निज साथा।।

अंतराय हरि विघन निवारा, करि जु निरंतराय भव तारा।
अंतरंग दै भाव सु भक्ति, बहिरंगा बुधि मेटि अयुक्ति।।

अंतरमुख मोकौं करि देवा, जनम-जनम दै अपनी सेवा।
अंतर आतम करि जगनाथा, बहिरातमता मेटि अनाथा।।

।।इति अंकार संपूर्ण।।

आगे अः अक्षर का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

अः काराक्षर-कर्त्तारं, देव-देवाधिपं विभुं।
सर्वाधारं निराधारं, वंदे वंद्यं सुराधिपैः।।

दोहा

अः कहिये ग्रंथनि विषैं, कृष्ण नाम परतक्ष।
कृष्ण जु आकर्षण करै, गुणपर्यय अत्यक्ष।।

।। इति अः संपूर्ण ।।

अथानंतर ककार का व्याख्यान करै हैं—

श्लोक

कलानिधिं कलातीतं, कामदं कामघातकं।
किं नाकघ्नं शिवाधारं, कीटकुंथ्वादिरक्षकं।।

पद्धरि

कल्याणदेव कल्याणराय, कल्याण सर्व लोग जु पाय।
कल्याण नाम तेरौ न और, धारैं जु दास ह्वै लोक मौर।।

कदली समान जग है असार, इक सार तूहि सर्वस्वधार।
करुणा निधान क्रम कंज तुल्य, तेरे जु तुहि स्वामी अतुल्य।।

बेसरी

करण कहावैं इंद्रिय नामा, तूहि अतिंद्रिय अकरण नामा।
कृपानाथ कृत कर्म निवारा, तू कृतकृत्य कृतारथ भारा।।

कृपण तजक तू परम उदारा, कबहु कृपणता भाव न धारा।
कृती कृपानिधि कसैर न कोई, कमी कछु कबहू नहिं होई।।

कवि काव्य कर रहित कलेसा, कर्मबंध निरबंध अलेसा।
कटुक कठोर वचन नहिं बोलैं, दास तिहारैं रहै अडोलैं।।

करकस बैन कतरणी हीये, तिनकै भक्ति जु नाहि सुनिये।
चित कठोरता त्यागैं संता, तब तोकौं पावैं भगवंता।।

कटकादिक तजि हौंहि इकंता, कष्ट गिनैं न भजन में संता।
कलकलाट कछू हू न सुहावै, कचकचाट को नाम न भावै।।

कबहू तोसौं मन न चुरावैं, तन मन धन कछु नहिं दुरावैं।
तब तोकौं भावै निज दासा, तजैं कदाग्रह जगत उदासा।।

कहाल संखादिक बहु बाजा, तेरैं बाजैं तू जगराजा।
सिद्धि करो प्रभु कारिज मेरा, कांत रूप है रूप जु तेरा।।

कछु करड कलिंद कसेरू, रांध्यौ धान जु राति बरोरू।
कटहल कमरख अर कचनारा, तजैं कठूमर दास तिहारा।।

कच नख वृद्धि न तेरै होई, महा मनोहर रूप जु होई।
कषा दुखनि कौ तू जिनराया, जीव रक्षिक तू रहित कषाया।।

कृतघन सम नहिं पापी कोई, लहै नहिं निज भक्ति जु सोई।
कृती महामुनि तेरे दासा, कनक कामिनी त्यागि उदासा।।

करणदंडि करणी सब त्यागै, तब तेरे गुण मांहि जु लागै।
कनक कामिनी तेरै नाही, तू विरक्त जोगी जग मांहि।।

कमलापति तू परगट नाथा,कमला भामा रूप न साथा।
कमला तेरी परणति स्वामी, तू परिणामी द्रव्य सुनामी।।

कहि पतंगादिक जे जीवा, सबकौ रक्षक तू जगदीवा।
कीट कालिमा तेरै नाहीं, कीरति तेरी सब जग माहीं।।

कीर जु सूवा कीर जु कीरा,तोहि जु ध्यावैं ते जगधीरा।
नींच ऊंच अंतर नहिं कोई, तोकौं भजैं सु तेरा होई।।

कुसमय काल पड़ै नहिं देवा, जहाँ होई तेरी नित सेवा।
तू कुसंग तैं न्यारा स्वामी, तू कुदृष्टि नासक गुणधामी।।

कुष्ट व्याधि नासै तुव नामैं, नसैं कुकर्म बहुरि नहिं जामैं।
कुलटा सम यह कुबुधि नारी, सो हम तैं न्यारी करि भारी।।

दोहा

कु कहिये आगम विषैं, पृथ्वी नाम प्रसिद्ध।
तुम पृथ्वी धर अखिलपति, कृत्य-कृत्य प्रभु सिद्ध।।

कु कहिये सिद्धान्त में, कुत्सित वस्तु सु नाम।
तुम सब कुत्सित रहित हो, परमेसुर अतिधाम।।

बेसरी

कोक वधू सी शक्ति न जोई, तातैं चैन लह्यो नहिं कोई।
अटक्यौ कनक कामिनी माहिं, भटक्यौ भव वन में सक नाहिं।।

कोटि अनंत चंद अर सूरा, तो परिवारूं मुनिवर पूरा।
कोड़ा कोड़ी जु काल अनंता, बीत्यौ मोकौ जगत वसंता।।

कांत अधिक तू कांता त्यागी, कांक्षा मेटि जपैं बड़भागी।
कंठ सुकंठ करै गुन गावै, सकल कामना दूरि बहावै।।

किंचत् मात्र विभूति न राखै, तेरी भक्ति महारस चाखै।
किंकर तेरे जेहि कहावैं, ते तेरौ निज रूपहि पावैं।।

दोहा

कः भाख्यो ग्रंथनि विषैं, नाम वायु को नाथ।
वायु हु तैं अगणित गुणौ, तुम में बल अति साथ।।

कः गायो प्रभु सूत्र में, नाम सुर्ग कौ ईस।
सुर्गनाथ सेवैं तुम्हें, जगतनाथ जगदीश।।

कः भाख्यो वाणी विषैं, नाम आतमाराम।
तुम परमात्मा ब्रह्म पर, जीव सकल विश्राम।।

कला बहत्तर जगत की, इनतैं परै जु कोय।
सुकला अनुभव की प्रभु, त्रय सत्तरमी होय।।

कहैं उकार सुपंडिता, शंकर-सुर कौ नाम।
सुखकारी आनंदकर, तू जितवर गुण-धाम।।

कहैं लृकार सिद्धान्त में, देव मात कौ नाम।
देव कौन सो गुरु कहै, सुनै शिष्य अभिराम।।

चौपाई

करि कुंभक जिन प्रणव जु ध्यायो, तित निर्वाणपुरीपथ पायो।
प्राणायाम जु तीन स्वरूपा, पूरक कुंभक रेचक रूपा।।

भुजंगप्रयात

करै चाकरी एक तेरीहि देवा, धरैं कौनकी नाथ तो टारि देवा।
तु आनंद चाखा रहै नित्य चाखा, धरे ज्ञान चापा क्रिया बांण राखा।।

सोरठा

कहैं सत्य कौ भूत, भूतारथ निश्चै करा।
तू है सत्य प्रभूत, सत्य तिहारौ धर्म है।।

कर्म चेतना ईश, बहुरि कर्मफल चेतना।
रूप भये जु अधीश, दै अब ज्ञान सुचेतना।।

इंद्रवज्रा

करहि मूढा झगरा जु झांटा, हिये जु मेला जिय में जु आंटा।
नहीं जु पावैं निज भक्ति तेरी, लहें सु तेहि न भ्रांति नेरी।।

वसंततिलका

कालो हि काल भुजंगो न डसै जु ताकौं।
पीवै पीयूष प्रभू नाम स्वरूप जाकौं।।
डाका परैं न जम किंकर कौ तिनौकैं।
चालै न मंत्र रति डाकनि कौ जिनौकें।।

दोहा

कर्म काई लगै नाहीं, ज्ञानरूपी विशाल तू।
शाखा गोत्रा न गात्रा है, शास्त्र जो शास्त्र पार तू।।

।। इति ककार संपूर्णम् ।।

आगे कवर्गी खकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

खला रागादयो सर्वे, येन ज्ञानासिनाहता।
ख्याति-कांक्षा-विनिर्मुक्ता, यं भजन्ति तपश्विनः।।

दोहा

ख कहिये आकाश कौं, तू आकाश स्वरूप।
शुद्ध चिदाकासो प्रभु, आनंदी सद्रूप।।

खः कहिये इंद्रिनि कौं, तू इंद्रिन तैं दूर।
मन वच बुद्धि कैं परें, निज स्वरूप भरपूर।।

खर तीक्षण को नाम है, खर किरण जु है भान।
भानचंद्र इंद्रादि सहु, तोहि भजैं भगवान।।

खर कठौर कौ नाम है, तजैं कठोर स्वभाव।
तब तोकौं पावैं प्रभू, तू दयाल भगवान।।

खर समान ते नर कहै, जे नहिं ध्यावैं तोहि।
खर कै पीठि जु भार है, इनकै परिग्रह होहि।।

चौपाई

खरतर बात जु तोहि सुहाय, कपट न भावै तोहि जु राय।
तोहि खगेन्द्र नरेन्द्र सुरेन्द्र, जपहि जाह फणिंद्र मुनिंद्र।।

खी इंद्रीधर जीवा, ख कहिए नाथ नाम इंद्रिनि कहे।
तू है खीपति पीवा, दीवा तू तीन लोकनि को।।

खग अनंत कीनै निसतार, खगतारक तू खगपति सार।
खड़गादिक सहु त्यागि जु शस्त्र, भजैं दिगम्बर रहित जु वस्त्र।।

ख्यातरूप तू ख्याति वितीत, ख्याति त्यागि ध्यावै जु अतीत।
ख्यात किये तैं आतम धर्म, है विख्यात महा तू मर्म।।

खात दियो घटघर के नाथ, चोर मिलि मोहादिक साथ।
हरे रतन दरसन अर ज्ञान, चरन तपश्चरन जु निज ध्यान।।

खिन्न खेद कबहू नहिं होय, निहकंटिक एकल भड़ सोय।
अद्भुत देव तिहारौ राज, काज न एक बड़े महाराज।।

गाथा

खिन्न कियो मोहि नाथा, साथै लागे विभाव परिणामा।
सांति करौ बड़ हाथा, शुद्धा बुद्धा महा धामा।।

भुजंगप्रयात

खुभ्यौ नाहि मेरै हिये तू जु स्वामी, खुभें इंद्रियादि विकारा विकामी।
रूल्यौ हौं जु तातैं अनंतो अनादि, बह्यौ भौंर जालैं तुझे त्यागिवादि।।

खुस्यौ हूँ लुट्या हूँ भयो हूँ विहाला, अबै लोक नाथा करौं नै निहाला।
खुटै नांहि मोपै कषाया बलिष्टा, कुटैं नाहि स्वामी विभावा जुदुष्टा।।

खुरो श्रंग वीतापि ढ़ोरा न राजे,तुझे नांहि ध्यावै अविद्या भरा जे।
तुही है जु खूटा तिहारे हि जोरै, मुनी वीतरागा विभावा जु तौरे।।

।।इति खकार संपूर्ण।।

आगे गकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

गणाधारं गताधारं, गात्रातीतं सुगात्रक।
गिरातीतं च गीर्वाणैः, सेवितं गुणरूपितं।।

चौपाई

गणनायक तू गणपति देव, गणधर आदि करैं प्रभु सेव।
गति-आगत्य रहित निरद्वन्द, गतिदायक अति सुगत अफंद।।

गमनागमन सु तज मुनिराय, निश्चल तोहि भजैं ऋषिराय।
गद कहिये रोगन कौ नाम, रागादिक सम रोग न राम।।

गर्भ तिहारे में सब लोक, गजपति पति कौ पति गुण थोक।
गर्व प्रहारी गर्व वितीत, गणी गणाधिप देव अतीत।।

गहर गती अगतिनि कौ तार, तू गणाग्रणी भवदधि पार।
गणातीत सब गण करि पूजि, ज्ञानिनि सौ तेरे नहिं दूजि।।

मंदाक्रांता

गाजा बाजा करि सुरनरा, तोहि पूजैं प्रभू जी।
तेरै बाजा अगणित बजैं, ग्रामणी तू विभूजी।।
धोकौं तोकौं अगणित गुना, तू गिरातीत स्वामी।
तेरी भाखी दिढ धरि गिरा, दास होवैं सुधामी।।

दोहा

गुणसमुद्र गंभीर तू, अति नय नायक नाथ।
शल्यरहित अविभाव तू, शक्ति अनंती साथ।।

गहै निगोद शरीर कौ, लहि कारण षटतीस।
पावैं तेरे भजन बिनु, जनम मरन अति ईस।।

चौपाई

गिलै काल जीवनि कौं नित्य, तू जुकाल गिल जगत अनित्य।
गिरधारी सेवैं तुव पाय, तू धरधारी देव अमाय।।

गीतगान करि इंद्र नरिंद, तोहि भजैं तू परम मुनिंद।
गीधादिक पक्षी बहु जीव, तुव भजि पायौ सौख्य अतीव।।

गुणी गुणाकर तू गुणरूप, गुणनिधि गुण अंभोधिनि रूप।
गुण नायक गुण ग्राम अपार, गुण निधान गुणवान जु सार।।

गुपत सु प्रगट महा गुणवंत, गुणि गुणरूप गणिक भगवंत।
गुह्यो गुसांई गुरतर गुरू, गुणाधार निरधार जु धुरू।।

गुणछेदी निरगुण है तू ही, रहित विभाव स्वभाव समूही।
निज गुण रूप सुरूप अनूप, मायक गुण तैं रहित अनूप।।

गुफा-वास करि धरि द्रिढ़ जोग, जोगी तोहि भजैं रस भोग।
गुपत वारता जानैं सर्व, तेरे दास अनास अगर्व।।

गुणतालीस जू उरधा लोक, दास न चाहैं अति सुख थोक।
चाहैं तेरी भक्ति रसाल, भुक्ति-मुक्ति की मात विशाल।।

अडिल्ल

गैवेयक लौं जीव गये बहुवार जी,
तो बिनु नाथ कदापि भये नहि पार जी।
पार पहुंचे जोहि भाव भक्ति धरैं,
तू गोपति गोपाल तोहि लक्ष्मी वरैं।।

गो कहिये जग मांहि गाय का नाम है,
गो सुत सम हम मूढ़ भज्यो नहिं राम है।
गो कहिये फुनि देवी सुरसुती है महा,
सौ प्रभु तेरी वानि और गौ ना लहा।।

गौतमादि ऋषिराय भजैं तोकों सदा,
तू हैं ग्रंथि वितीत ग्रंथ धर नहि कदा।
ग्रंथ परिग्रह नाम तू न परिग्रह गहै,
ग्रंथि गांठि कौ नाम ग्रंथि भेदी लहे।।

।।इति गकार संपूर्ण।।

आगे घकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

घटस्थमघटं देवं, घाति चाघाति वर्जितं।
सर्वमात्रामयं धीरं, वीरं वंदे महोदयं।।

दोहा

घर-घर की सेवा करत, उपज्यौ अति गति खेद।
अब तू अपनी टहल दै, लै निज माँहि अभेद।।

घर घरणी में हम लगे, धन धरणी की चाह।
चाहि हमारी मेटि सब, बहु भरमावै काहि।।

घटि बधि तेरै कछु नहीं, तू घटि बधि तैं दूर।
घट घट अंतरजामि तू, घट भेदी घट पूर।।

घन सम चिदघन तू सही, घन है वज्र सु नाम।
कर्म पहार प्रभंज तू, अति कठिन जु अति धाम।।

घन भाखैं जन मेघ कौं, तू है मेघ स्वरूप।
अमृत झर लावैं सदा, तपति-हरन सुखरूप।।

घड़ी घड़ी इह जाय है, वृथा जु मेरी आय।
तेरी भक्ति बिना विफल, भक्ति देहु जगराय।।

घस्मर सूरज नाम है, तू है त्रिभुवन सूर।
भ्रांति निसाहर बोधकर, किरण अनंत भरपूर।।

घर घरनी तजि मुनिवरा, जपै तोहि निजरूप।
घर घर कौ मरमी तूही, अघट अघाट अनूप।।

घायल हैं हम मोह के, घाव लगे अति जोर।
निज औषध दै घाव भरि, तूहि मोह मद मोर।।

घास फूस सम जग विभव, हम नहिं चाहैं याहि।
कणरूपी निज भक्ति दै, और नहि कछु चाहि।।

घिर्यो भरम के घेर हू, तू छुड़ाय जग देव।
छूटि भरम तैं मैं सही, करि हौं तेरी सेव।।

घिण घिणावणौ यह जु तन, यामै वास न इष्ट।
तन धरिवौ हमरौ जु हरि, दै निजवास प्रतिष्ट।।

घृत दधि खीर सु ईख रस, लवण आदि बहु स्वाद।
तेरी भक्ति समान रस, और नहीं अति स्वाद।।

घी जल तेल इत्यादि ए, चर्म पतित नहि लीन।
भाषैं तेरी श्रुति इहै, भखै न दास अलीन।।

घूक समान जु हौं प्रभू, नहिं लखियो तू भान।
हमरी चक्षू उघारि प्रभु, तू अनंत गुणवान।।

घूकपणौं हरि देहु जु, चकवे को हि स्वभाव।
चकवो चाहै दिवस कौं, मैं चाहौं तुव पाव।।

घूमत घूमत हौं फिर्यो, महा मोह मद पीय।
हमरी घूम मिटाय प्रभु, तू तारक अदुतीय।।

घू कहिये आगम विषैं, पीड़ा नाम प्रसिद्ध।
हमरी पीर मिटाय प्रभू, तू दयाल अति सिद्ध।।

बेसरी

घनगर्जित सम तेरी वानि, सुनि हरषैं भवि अति गुण खांनि।
भव्यन से न शिखंडी और, तो सम मेघ न तू जग मौर।।

।। इति घकार संपूर्ण।।

आगै ङ.कार का व्याख्यान करै हैं —

श्लोक

ङकारक्षर-कर्तारं, भेत्तारं कर्म-भूभृताम्।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वंदे लोकाधिपं विभुं।।

।। इति ङ कार सपूर्णम् ।।

आगै चकार का व्याख्यान करैं हैं —

श्लोक

चतुर्वक्रश्वचारित्री, चिच्चिमत्कार चिन्मयः।
अचीवरो निराभर्णो, न च्युतो जन्ममृत्यु हा।।

दोहा

चउपन दूनें नाथ जी, मनिका फेरै लोक।
मन का मनिका जौ फिरै, तो हौंवे सुखथोक।।

चउसठि चमर जु ढ़ारहिं, सुरपति करि करि भक्ति।
तेरौ पार न पावई, तू दयाल अति शक्ति।।

चउहतरि दूना सबै, प्रकृती टारि क्रिपाल।
दै अपनौ निज वास जो, अविनश्वर गुणपाल।।

चउरासी मैं हूं रूल्यो, बिना भक्ति जगदीस।
अब अपुनौं निज दास करि, हरि अविवेक मुनीश।।

चकवा सम भवि जीव हैं, तू दिनकर सम देव।
भव्य चकोर समान हैं, तू ससि सम अतिभेव।।

चढ़ि जगसीस जु तुव पुरैं, आवैं तुव मत पाय।
चटक मटक रहितो तुही, रहित विभाव सु राय।।

चणकादिक द्विदला प्रभू, दही मही भेलान।
न लेवैं तेरे दास कछु, वस्तु चर्म में लान।।

चरन कमल तेरे भजैं, चलन चलैं अति शुद्ध।
तेरे चरित जु उर धरैं, ते दासा प्रतिबुद्ध।।

चर्म-रंध्र नारीनि कौ, तामैं राचें मूढ़।
चमचोर न गावै तुझे, तू सुशील अति गूढ़।।

चक्षु हिये के खोलि कैं, लखैं रावरो रूप।
तेहि सचक्षु सुजान है, और न बुद्धि स्वरूप।।

चरचा तेरी नित्य है, चरचा कौ नहिं अंत।
देहादिक कौ अंत है, आतम देव अनंत।।

चर्मकार के गेह सम, देह हमारौ निंद्य।
तुव भजिया सुपुनीत है, तु त्रिभुवन करि वंद्य।।

चिद्घन चिन्मय देव तू, चिन्मूरत चिर-रूप।
चिरंजीव जगपीव तू, शुद्ध चिदातम भूप।।

सोरठा

चीन्हौं मैं नहिं तोहि, चीन्हें विषय जु जगत के।
अब तू दै शिव मोहि, न्यारौ करि भव भ्रान्ति तैं।।

चीर रहित तू देव, निराभर्ण भासुर तुही।
देहु दिगम्बर वेस, तुही अछेव अभेव है।।

चीले तेरे चालि, लहैं तत्त्व जोगीसुरा।
चीलै तेरे घालि, मैं मारग भूल्यौ फिरूं।।

चीर पटंबर त्यागि, त्यागै सर्व जु कामना।
तेरै मारग लागि, मुनि निवृत ह्वै पद भजैं।।

चुगली है अति पाप, तैं निंदी सब ग्रंथ में।
चुगल लहेंगे ताप, तोहि न पावै ते सठा।।

चूंट चांट हरि देव, सेव देहु निह काम जो।
चेतन अतुल अछेव, तुही चेतना निधि प्रभू।।

चेतनता दै ईश, चेतनता कौ पुंज तू।
चेतन रूप अधीश, तू निधान भगवान है।।

सवैया इकतीसा

चूहे सम हौं जु जीव, कायर अनंत देव,
रहौ तन बिल मांहि, मूरख अनादि कौ।
मेरी घात लागि रहै, पाप पुन्य वायस जु,
काल मारजार मोकौं, तकत है आदि कौ।।
मिथ्याभाव स्वान मोहि, मारिवे कौं संग लागै,
इनतैं छुड़ाय राय, करे भव दाहि कौ।
तू तो दयानाथ तेरै, साथ सब शुद्ध भाव,
तो छता हुँ पीड़ित, रहौ जु महावादि कौ।।

चूत वृक्ष आंब कौ है, नाम जगमांहि ख्यात
तू है प्रभू आंब तैं, अधिक सुरसालजी।
सूकै नांहि कबहू, सजल घन जो सदीव,
सम्यकदरस मूल, अतिहि विशाल जी।।
ज्ञान-पेड़ व्रत-डाल, संजम ही साखा अति-
शुद्धभाव दल अति, विमल प्रवाल जी।
गुण ही सुफूल अर, गंध निज-परनति,
केवल प्रभाव फल, रूप जगपाल जी।।

सोरठा

चेरा करि जगराय, पाय सेव दै ईशरा।
चेला करि सुखदाय, भ्रम घेरा तैं काढ़ि जी।।
चेला नहिं तू नाथ, चेला सब तेरे प्रभू।
तू अचेल गुण साथ, चेल न देह न दिगपटा।।

मोतियादाम

चहैं तुव भक्ति न चांहहि भोग, अयाचकरूप गहै निज जोग।
न याति न पाति न न्यातिनि कोय, सबै तजि लोक भजैं मुनि होय।।

दोहा

चित्त राखें कोमल सदा, बोलहि हित मित बैन।
तन मन करि दुख देहि नहिं, ते दयाल बुधि नैन।।

।। इति चकार संपूर्ण।।

आगे छकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

छल-छद्म विनिर्मुक्तं, सछास्त्रस्थनिरूपकं।
सछिवास्य पदधातारं सछीलनायकं विभुं।।

दोहा

छद्मस्थ न तू देव है, पावैं नहिं छद्मस्थ।
तू कैवल्यसुरूप है, प्रभू स्वछंद मध्यस्थ।।

मालिनी

छह जु प्रवल उर्मी, नाहिं तेरै जु कोई।
छबिधर छविकारी, तू छबीलो जु होई।।
छबि जु निरखि तेरी, मात ह्वै सर्व देवा।
छबिमय शुभमूर्ति, नाथ दै मोहि सेवा।।

मालिनी

छाया तेरी न लहें हिंसका जे,
पावैं दुक्खा जीव विध्वंसका जे।
तू है रक्षा कारणौं सर्व जीवा;
पापाचारी नांहि पावैं कुजीवा।।

दोहा

छहनिवै जु हजारही, चक्रवर्ति तजि नारि।
तोहि भजैं छह खंड कौ, राज त्यागि व्रत धारि।।

चौपाई

छाछि दही ए बिदल जु युक्त, तेरे दास गिनैहिं अयुक्त।
छाछि दही वसु पहर वितीत, तूहि निषेधै देव अजीत।।

छाछि दही पानी इत्यादि, कुल किरिया विनु लेवौ वादि।
छाछि समान सकल संसार, घृत रूपी तू जग में सार।।

छाज समान गुणग्रह होय, तब पावैं तोकौं प्रभु कोय।
छांडि छांडि सब जग परपंच, एक तोहि ध्यावैं सुख संच।।

छाद समान जगत के भोग, अभिलाषै अज्ञानी लोग।
छाकैं रहे मोह मद पीय, जन्म बिगारैं मूढ़ स्वकीय।।

सवैया इकतीसा

छील के जु पात सम, तेरै ढिग चंद सूर,
छुट्यौ तू न बंधै कभी, अमल अबंध है।
छुरिका न पासि अर, पासि सब काटे तूहि,
छुटैं तोहि ध्यायें, छुटकाल मांहि बंध है।
मेरी देह पूति गंध, छुउ कैसे तोहि ईस,
तू तौ अति सुंदर, सुमूरति सुगंध है।
छूटि मेरी करौ देव, छूटि करि करौं सेव,
तोहि नांहि सेवै सोई, हिरदै कौ अंध है।।

छोटे मोटे जीवनि कौ, रक्षक है तूही नाथ,
छोटे मोटे दोषनि कौ तूही हर देखिए।
तेरी सेवा बिनु छोछी, करनी न आवैं कामि
करनी कौ मूल तेरी, भक्ति जो विसेखिये।

छोहर हैं तेरे सब, सुरनर नाग मुनि
तू है तात सबकौ, प्रसिद्ध इहै लेखिये।
तातैं सब त्याग जोग, तूही एक लैंन जोग,
सबै जग त्यागि एक, तोहि कौ जु पेखिये।।

सोरठा

छोति हरैं मलरूप, विमल-रूप तू देव है।
छोप नांहि जग भूप, तू अछोप परमेसुरा।।

छोभ न छोह न देव, तो सम सोम न जगत में।
छोड़े दोष अछेव, गुण निवास तू राजई।।

छंद कहिये श्रुति माहिं, निरमलता कौ नाम है।
तो बिनु निरमल नाहिं, समल सबैही जगत के।।

छं भाखै मुनिराय, नाम तटस्थ जु वस्तु कौ।
तू तटस्थ सुखदाय, और सब बूडि जु रहै।।

छंद न बंध न फंद, छंद सबै परगट करै।
तू है त्रिभुवनचंद, तिमर हरन अमृत झरन।।

छेदन कौ है नाम, छः कहिये आगम बिषैं।
तू छेदै प्रभु काम, क्रोध आदि दोषा घनें।।

छः संवर कौ नाम, भाखैं संवर-धर मुनी।
तू जिनवर विश्राम, संवर-रूप अरूप तू।।

दोहा

छटा तुल्य जग भूति है, तुव विभूति है नित्य।
छति तेरी सत्ता रमा, संपति दौलति सत्य।।

।। इति छकार संपूर्णम्।।

आगे जकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

जगन्नाथं जनाधीशं, जातरूपा-भमीश्वरं।
जिनं जीवाधिपं धीरं, जुटितं च न माययां।।

छप्पय

जगजीवन जगभान, नाथ तू जगत प्रकाशी।
जगनायक जगदेव, शुद्ध तू तत्त्व-विकासी।।
जगत शिरोमणि धीर, तूहि जगमान अमाना।
जगत उधारक ईश, तूहि जगदीस सुजाना।।
जगत्यागी जगभाल सांई, जगतजीत अघजीत तू।
जड़ता रहित सुग्यान रूपी, अजड़ अरूप अतीत तू।।

जड़-चेतन सब भास, तुहि चैतन्य सुरूपा।
जस तेरौ नर नाम, देव गावैं जु अनूपा।।
जनम जरा अर मरन, मेटि हमरे अविनासी।
जघन मध्य उतकिष्ट, भेदभासक सुख रासी।।
तू न जघन्य न मध्य देवा, उतकिष्टा उतकिष्ट तू।
जल थल उपन्न सब कष्ट हर, जठराग्निहर इष्ट तू।।

जनपति जय जयदेव, दास पावैं जय तो तैं।
जहैं मूढ़ता भाव, रावरौं अनुग्रह होतैं।।
बिनु अनुग्रह तप करैं, तौहु पावैं नहिं पारा।
मास-मास उपवास धरैं, जल बिनु तप भारा।।
एक बूंद जल पारनौ करि, बहुत काल ऐसे तपा।
करिहि तदपि तो बिनु गुसांई, कर्म भर्भ कबहु न खपा।।

दोहा

जगत जेष्ट जगपाल तू, जगन्नाथ जगबन्धु।
जगत ज्योति जग योनि तू, जगत गर्भ निरबंध।।

जग-सुन्दर जगराय तू, जगत-धात जगपीव।
जगत तात जग-छात तू, जग पालक जगदीव।।

मंदाक्रांता

जाच्यौ देवा भव-भय हरै, तूहि है जान राया।
जाचैं काकौं तुव तज प्रभू, तू अवाची अकाया।।
जाया माया कबहू न धरै, जाय आवैं न स्वामी।
जाकौं जोगी जग तजि रटैं, सो तुहि है विरामी।।

दोहा

जाकै काहू काल ही, आल जाल नहिं कोय।
नागर तूहि सुजागरू, परम उजागर सोय।।

जाड़ौ लोक अनंत तैं, जामैं सर्व समाय।
परमाणू तैं पातरौ, मुनिहु न देखो जाय।।

जाप जपैं तेरे मुनि, जपैं देव नर नाग।
जालिम तू मोहादि हर, भक्ति धरैं बड़भाग।।

जिननायक जिननाथ तू, जिनपति तू जिनराय।
जिनमारग भासी तुही, तू जिनदेव अमाय।।

जिती जितेंद्री जितगुरू, जितमन जितबुधि धीर।
जितविमोह जितकाम तू, जिताजीत अतिवीर।।

जित जित देखैं नाथ जी, जिहाँ जिहाँ तू ईश।
जिम जिम तो कौं ध्याइए, तिम तिम शुद्धि अधीश।।

जिय की भ्रांति सबै मिटै, हिय की सल्य पलाय।
जब तू आवै घट विषैं, जित जीतक अधिकाय।।

जीव जगत के हम प्रभु, गुण वरनन नहिं होय।
भक्ति भाव भासै गुणा, और न कारन कोय।।

सवैया तेइसा

जीभ अपार, करै पति नाग,
जपैं बड़भाग, सुपार न पावैं।
जिश्नु अनेक, जु, नैंननितैं,
निरखै तुव रूप, सुतृप्ति न आवैं।।
जे अहमिंद्र, अनुत्तरवासि सु,
नित्य निरंतर, कीरति गावैं।
काल असंखित, तेहु न पार,
लहैं गणधार, न तोहि जु भावैं।।

जीभ जु एक न, शक्ति सुवाच्य,
महा मति हीन, न आगमधारी।
नाहिं अध्यातम, कौ कछु लेस,
न धर्म गृहस्थ न, साधु अचारी।।
व्रत न जोग, नहिं प्रभू ज्ञान,
सु कैसे हि गाँवहि, कीरति भारी।
डेड या भवकूप, जु के हम,
तू गुणसिंधु, अबंध अपारी।।

दोहा

जुदौ मोह मद द्रोह तैं, जुदौ जगत तैं राव।
माया काया तैं जुदौ, तातैं जुदे विभाव।।

जुदौ नहि गुण ग्यान तैं, नहिं संज्ञा तैं भिन्न।
जुदौ नहिं आनंद तैं, आतमदेव अभिन्न।।

जुगपत तेरौ ज्ञान है, व्यापि रह्यो सब माहिं।
जुको दिवस तो बिनु गमैं, धिक सो दिन सक नाहिं।।

जुरैं न तो सौं कर्म ए, भिरै न तो सौं भर्म।
परें परैं फिरते फिरैं, तू अति बल अतिधर्म।।

जुरैं न तो सों जीव यह, तातैं रुल्यो अपार।
जुरैं चित्त करि तोहि सौं, ते पावैं भवपार।।

सोरठा

जूनौ तू अतिनाथ, काल अनंतानंत कौ।
नित्य नवल गुण साथ, जूनौं तू नहि देखिये।।

जेठमास गिर सीस, ताप तपै तो पनि प्रभू।
तुव भजिया बिनु ईश, कटै कर्म की पा सिना।।

जोरावर अति मोह, पारैं तोतैं आंतिरौं।
मेटै तू निरमोह, मोहतनी जोरावरी।।

जोम धरे जगनाथ, हम लोगनि सौं कर्म ए।
जोम चलैं नहि नाथ, तो आगै सर्व कर्म की।।

जो है वेग जु नाम, एकाक्षर माला विषैं।
वेग उतारौं राम, भवसागर गंभीर तैं।।

जो तेजस्वी नाम, तू तेजस्वी पराक्रमी।
जो जो कहिये राम, सो सो तो हि फवै विरद।।

चौपाई

जीव समास गुनीस जु होई, सबकौ रक्षक तू प्रभु सोई।
रत्नत्रय भेद जु गुणतीस, तूहि प्रकाशै विभू जगदीस।।

सोरठा

जैसे रेसम कीट, बंधै अपनी लाल तैं।
तैसे जिय धरि कीट, बंधै जगवासी जना।।

मोतियादाम

जपैं जु यमी नियमी मुनिराय, भजैं हि शमी जु दमी जतिराय।
रटैं नहि तो हि सु ते हिय अंध, मिथ्यातहि राचि करैं अघ बंध॥

दोहा

जे अभक्ष भोजन करैं, पीबें जेहि अपेय।
करहि अगम्यागम्य जे, ते करुणा नहि लेय॥

॥ इति जकाराक्षर संपूर्ण ॥

आगे झकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

झखध्वज-रिपुं धीरं, सर्व-प्राणिहितं परं।
सर्वमात्रामयं धीरं, वंदे देवेन्द्रवंदितं॥

गाथा

झगरा तेरै नाही, तू द्वयवादी अनेक वादी है।
अति गुण तेरै मांही, सतवादी स्यादवादी है॥

झालरि कौ झुणकारा, तेरे बाजैं अनेक वाजित्रा।
झांझि मजीरा सारा, तू राया लोक कौ मित्रा॥

झाल जु त्रिस्ना रूपा, तो बिनु साता न होई काहू तैं।
कर्म जु झार सुरूपा, दरिद्रि नासैं जु साहू तैं॥

झुके न तू अघ मांही, तो माहीं धर्म देखिये अतुला।
तू अधरम में नाहीं, नाहीं भाव धरैं समला॥

सवैया इकतीसा

झूठौ है इकंतवाद, जामैं नाहीं स्यादवाद,
क्षणिक प्रवाद जाकों, बोध मत कहिये।
झूठौ विपरीत महा, जामै जीवघात कहा,
झूठौ संसै थाप, जाको भूलि हू न गहिये॥

झूठौ नास्तीक वाक, जाकौं कहे चारवाक,
झूठे कौल कापालिक, करूणा न लहिये।
झूठौ विनय मिथ्या जामें, पूजिये जु सबै देव,
झूठौ है अज्ञान जातैं, भ्रांति मांहि बहिये।।

सोरठा

झूठ समान न पाप, तेरै झूठी बात ना।
झूठे पावैं ताप, भक्ति लहें सांचे नरा।।

झूठे सबही देव, काल जीतिवे सक नहीं।
तेरी करहि जु सेव, तेहि काल जीतैं प्रभू।।

झूठे मिथ्या पंथ, तिन में तेरी भक्ति नहीं।
झूठे मिथ्या ग्रंथ, जिनमें तुव चरचा नहीं।।

झूंठ त्यागि नरनाथ, वन उपवन गिरि सिर वसैं।
करै रावरौ साथ, हाथ करै निरवान तैं।।

झूलै निजरस मांहि, स्वरस विहारी देव तू।
सब छति है तुव पांहि, भव झेरा तैं काढ़ि प्रभु।।

।। इति झकार संपूर्णम्।।

आगे अकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

अकाराक्षरं कर्तारं, सर्वज्ञं सर्व- कामदं।
शिवं सनातनं शुद्धं, बुद्धं वंदे जगत्रियं।।

मोतियादाम

अकार जु अक्षर मूढ जु नाम, नहीं हमसे सठ और जु राम।
तुझै जु विसारि रचे भव मांहि, कछू सुधि आतम की प्रभु नाहिं।।

ञकार जु नाम विषैं परसिद्ध, सु इंद्रिनि के रस मांहि जु गिद्ध।
लहैं नहि भक्ति जु ते मतिहीन, विषै सम पाप न और जु लीन।।

ञकार जु नाम जु जर्जर बैन, तुही मधु बैन सु केवल नैन।
जपै सुर जर्जर वृद्ध महान, तथा सुर जर्जर क्रोध जु बान।।

।।इति ञकार संपूर्णम्।।

आगे टकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

टकाराक्षर-कर्तारं, चिच्चिमत्कार-लक्षणं।
वंदे देवाधिपं देवं, सर्वभूत-हितं परं।।

दोहा

टर्यौ नहीं टरि है नहीं, टरै न कबहु देव।
अटल अचल अति विमल तू, दै स्वामी निज सेव।।

सवैया इकतीसा

टण टण बाजै तेरै, बाजै अति कोटि भेव,
जीति की जु टेव तेरी, अतुल अछेव है।
तेरे पुर मांहि नांहि, सीत घाम कोई धाम,
टपका न परै जहां, रति कौन भेव है।।
टपकै अमी अपार, तेरे बैन सुने सार,
त्रिस्ना कौ न नाम रहै, स्वरस स्व बेव है।
अनुभौ की कला तो तैं, पाइये त्रिलोक नाथ,
अनुभव कौ दायक तू, देव एक एव है।।

बेसरी

टामटूम सब त्यागि मुनीशा, रहैं तो मई ऋषि अवनीसा।।
टापू सम ए लोक अलोका, तेरे ज्ञान सिंधु में थोका।।

टांच टींच देवल की दासा, सौ राचै करि भगति प्रकाशा।
पूजादान गृहस्थ जु धरमा, मुनि के दरशन मात्रहि परमा।।

टाटी मोह जु माया रूपा, दरसन कौ आड़ी जु विरूपा।
तोरै एकहि टल्ला सेती, त्यागैं जड़ परणति हैं जेती।।

टिकै निजातम भावनि मांहि, तेरे दास जु संशय नांही।
बिना टिकांनी सकट न चालै, भगति बिना व्रत ज्ञान न पालै।।

टिक्यो न हु कबहू तन मांही, ए तन यौंही उपजैं जांही।
टिकौ अनंतानंत जु काला, कबहु टरौं नहिं होई अकाला।।

टिक्यौ रहूं अनुभव रस मांही, इहै भगति फल संसे नांही।
टिकैं न तोपैं कर्म अनंता, हम सौं टिरे टारि भगवंता।।

टीप टाप जग की सहु झूठी, इनतैं मुनि की वृत्ति अनूठी।
टीप टाप बिनु तू अति सोहैं, देव दिगम्बर जन मन मोहैं।।

टीकौ त्रिभुवन कौ जु ललाटा, तेरै सोहै तू अति ठाठा।
टीकायत सब मांहि तूही, नई नई टीपै न समूही।।

टीसि न तेरै रीसि न कोई, टींटि करम की टारै सोई।
रूखा टुकरा पाय मुनिंदा, करैं रावरौ ध्यान जिनंदा।।

सोरठा

टार्यौ टेरि जु टेरि, टांग्यौ इनि अति दुख दीयो।
कूकों तेरि जु नेरि, राव हमारो न्याय कर।।

।। इति टकार संपूर्णम्।।

आगे ठकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

ठकाराक्षर-कर्तारं, दातारं धर्म-शुक्लयो:।
नेतारं मोक्षमार्गस्य, वंदे तत्पद-लब्धये।।

दोहा

ठग मोहादि अनंत है, तिनहि ठगै मुनिराय।
ते तेरै पुर चैन सौं, आवैं भ्रांति गुमाय।।

ठग विद्या सब त्यागि कैं, निह प्रपंच ह्वै कोय।
सोई तोकौं पावई, दास अवंचक होय।।

।। इति ठकार संपूर्ण।।

आगे डकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

डकाराक्षर-कर्तारं, सर्व प्राणि-हितं करं।
वंदे लोकाधिपं देवं, सर्व-मात्रा-प्रकाशकं।।

दोहा

डरै न काल कराल तैं, तेरे दास न चिंत।
कौन कमी जिनकें प्रभू, पायो तौ सम मित्र।।

वसंततिलका

डकैत चित्त सम और न होई।
तेई जु दास मन रोक ही धीर होई।।
तुही जु सिंधु प्रभु डाबर और देवा।
सौसै न तोहि रवि काल तुही अछेवा।।

डाबा समान इह लोक तुही जु रत्ना।
तूही करै जु जग जीवन जीव यत्ना।।
डारे विभाव जड़भाव अशुद्ध रूपा।
तेई भजैं सुमन लाय गुण-स्वरूपा।।

सोरठा

डेढ दिवस को आय, तुछ मात्र माया इहै।
तामहि भूल्यो राय, जीव न ध्यावे तोहिजी।।

डिढ़ता धरि मन माहिं, डिगाडिगी सब त्यागिकैं।
तोहि भजैं सक नाहिं, ते निजदास प्रसिद्ध हैं।।

डिगरैं नाहिं कदापि, तेरी सेवा सौं प्रभू।
तन मन तो महि थापि, भजन करै भौ जल तिरैं।।

डिम डिम बाजैं नाथ, तेरै बहु बाजा प्रभू।
लागे मुनिजन साथ, तिरैं तेहि भव सिंधु तैं।।

डिगरि गये जु विभाव, दासनि सौं लरिवे न सके।
तेरौ अतुल प्रभाव, तू डीला अति पुष्ट है।।

डीठि न लागै तोहि, अति सुंदर अवनीप तू।
सब मूठी में होंहि, तेरी डीठि सबौं परैं।।

डील अनंत स्वभाव, गुण पर्याय जु रावरै।
तू अनंत बलराव, भाव-विभाव धरैं नहीं।।

डेरा इह तन काचों जीवनि को प्रभू।
तामें राचे लोय, महाभाग ध्यावैं तुझे।।

डुलि डुलि चहुंगति मांहि, दुखी भयौ अति जीव इह।
तु तारे सक नांहि, भव तारक जगदीश तू।

डूब्यो जीव अनादि, तेरी भगति बिना प्रभू।
धरे जनम बहु वाहि, अब उधारि कृपा करो।।

डूंगर-पति गिर मेव, सो तो सम निश्चल नहीं।
तू मरजादा मेर, पूरण परमानंद तू।।

डूडूगर अतिमोह, जातैं हारैं सुर नरा।
करै प्रभू अति द्रोह, इह द्रोही संसार कौ।।

डूम ह्वै रहे देव, तेरे सुर नर मुनिवरा।
कहें विरद अति भेव, तू अछेव गुण-सिंधु है।।

डेडर सम हौं दीन, कहा कहि सकौं तव-गुणा।
तू गण सिंधु अधीस, जगदीश्वर अवनीस तू।।

।।इति डकार संपूर्णम्।।

आगे ढकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

ढ़काराक्षर-कर्तारं, ज्ञानरूपं जगद्गुरुं।
लोकालोक-प्रज्ञातारं, देवं देवाधिपं विभुं।।

अडिल्ल छंद

ढ़ कहिये श्रुत मांहि, मूढ़ का नाम है।
ते नर मूढ़ अयान, भजैं नहि राम हैं।।

ढ़ कहिये ध्वनि नाम, ध्वनि जु ते सही।
तेरी धुनि सुनि पाप, नास ह्वै सकल ही।।

ढ़रे भव्य की वोर, अभव्य निपरि नही।
ढ़ब तेरौ ही सांच, और ढब झूठ ही।।

ढ़लक्यो नहि इह चित्त, रावरी भक्ति में।
तातैं रूल्यो देव, अनंती अगति में।।

ढ़कै दोष जो कोय, पराये धर्म-धी।
सो पावै तुव भक्ति, त्यागि सहु भर्म-धी।।

ढ़ाल जगत की तुहि, दया कौ पुंज है।
परम पुनीत कृपाल, गुणनि कौ कुंज है।

ढ़ाक पत्र सम चंद, सूरतो देखता।
रंक सबै नर देव, नाथ तो पेखता।।

ढ़ाढ़िस बांध मुनिंद, पंथ तेरो गहै।
ढ़ाढि सीख बिनु देव, दास भाव न लहैं।।

ढ़ाण चूक ए जीव, भक्ति ढाण न लहैं।
तूहि बतावै ढ़ाण, तोहि मुनिजन चहैं।।

ढ़ाहैं तैं प्रभु कोट, अविद्या के सबैं।
भागि गये सब कर्म, भर्म भै करि तबै।।

ढ़ाहैगो प्रभू तूहि, हमारे बंधना।
तेरै सपरस नांहि, नहीं रस गंध ना।।

ढ़ाहा तोड़ बहै जु, नदी आसा तणीं।
तुही उतारैं पार, और कोई न धणीं।।

ढ़िग ही रहै जु नाथ, मूढ़ जानै नहीं।
ढ़ीले आतम काज, करन कौ सठ सहीं।।

ढ़ींचाढ़ींच मचाय, भूलि भौ में परें।
तोहि न ध्यावैं नाथ, पाप कर्मनि भरें।।

सवैया इकतीसा

ढूक जु आवै काल, सबै तजि जगजाल,
प्रणव पुनीत मांहि, द्रिष्टि धरि बावरे।
ढूंढै कहा माया कौ जु, ढ़ो ढूंढ़ि एक चेतन कौं,
चेतन में लीन होहु, त्यागि सब चावरे।
ढूकै तू विषैं जु मांहि, यामैं कछु सिद्धि नांहि,
ढूंढ्यौ नांहि पावैं काहू, आप ही में दाबरे।
ढूंढ्यो तैं सबै जु लोक, पायो नहि सुख थोक
अब जगदीश भजि, समज उपाय रे।।

ढ़ेढ़ घर सम देह, भर्यो दुरगंध सौं जु,
हाड मांस चाम रोम, कुथिति कौ पुंज है।
उदधि के जल सौं, पखाले तऊ शुद्ध नाहिं,
असुचि कौ सागर, जो पापनि कौ कुंज है।
बह्म होय ढ़ेढ़ सौं, मिलाप राखै कौन बात,
छुये पाप लागे जाकौं, दोषनि कौ भुंज है।
तु तो सठ बह्म भया, ढ़ेढ़नि सौं हित राखै,
इहै नाहिं बह्म तासु, मारै कहा गुंज है।।

सोरठा

ढ़ै इह अष्टम मात्र, सब मात्रा में देव जो।
ताकौं ध्यान सुपात्र, तातैं भव भ्रमण मिटै।।

सवैया तेईसा

ढ़ोर होय रह्यो कहा, नैक तौ विचार करि,
ढ़ोलि मिथ्यामद कौ जु, बावरौ तुझे कियौ।
ज्ञान कौ बजाय ढ़ोल, निज पर बल तोलि,
भगति मदद लहि, गाढ़ो करिकै हियौ।
करमनि कौ वंश खोय, निज रस अंश जोय,
बांधि सब रागादिक, कष्ट उन ही दियौ।
ढ़ौकि ढ़ौकि प्रभुजी कौ, ढ़ोरी लाव जिन ही सौं,
ढ़ोक दै जु बारंबार, वांछै जु प्रभु लियो।।

ढ़ौकि परमेशुर कौ, ढ़ोरी लाव साधुनि सौं,
ढ़ौरी लाव दानशील, जप तप व्रत सौं।
ढ़ोलैं जिन दया रस, भरि ज्ञान सीसे मांहि,
ढ़ोरता जु छांड़ि सब, रूखो हैं अव्रत सौं।
ढ़ोल खोसि मोह कौं जु, पकरि मरोरि बांधि,
निज रस छाकि भया, पूठि दै अकृत सौं।
ढ़ौकैं मति मिथ्या देव, मिथ्या गुरु की न सेव,
धरि जति मत भेव, चूकै मती व्रत सौं।।

ढ़ंपै मति औगन कौं, गुरु के निकट जाय,
सबै निज दोष भास, आलोचन करि रें।
ढ़ंप पर दोषनि कौ, पर दोष जिन भासै,
गुण-ग्राही होहु भय्या, कथनी तू हरि रें।।
कथनी करै तो एक, हरि ही की करि सदा,
हरि ही कौं जपि अर, हरि ही सौं अरि रें।
एक जिन नाम बिनु, आन जिन भासे भया,
मौनी होय अंदर में, जिन ही कौ धरि रें।।

ढ़ंग तू पकरि भया, ढ़ंढ़-मति होय रहैं,
ढ़ीचाढ़ीची तजि कै, विमोह ही सौं लरि रे।
सबै तू उपाधि तजि, एक प्रभू ही कौं भजि,
मुनि मत माहि रजि, प्रभू पाय परि रे।
ढ़ंढ़ता विनसि जाय, ढ़ंग तेरौ बंधि जाय,
पावै मोक्ष द्वार भव, सागर कौं तिरि रे।
देह तौ तजी अनंत, दोष कौ न कीयौ अंत,
अब ऐसी करि पंच, देहनि सौं मरि रे।।

दोहा

ढ़: कहिये मात्रांतिकी, तू सब मात्रा माहिं।
तेरी सी मात्रा प्रभू, तीन लोक में नाहिं।।

।। इति ढ़कार संपूर्णम्।।

आगे णकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

णकाराक्षर-धातारं, ज्ञानिनं परमोदयं।
सानंदं परमानंदं, वंदे सर्वेश्वरं गुरूं।।

दोहा

णिच्चा-णिच्च रूव मुणि, सुद्ध-बुद्ध अविरुद्ध।
णियमादि सु उर धारि जिय, जप जग गुरु अणिरुद्ध।।

णेय ण जम्हि णाणे य में, सो सहु भासक तौ हु।
ताहि भजहु परपंच तजि, चाह हु सिवपुर जौहु।।

णो इंदिय णो मण हवई, णो वण विणो गंध।
णो रस फरस विसुद्ध जिय, अप्पा मुणि जु अबंध।।

णोवम णिरूवम णाणतण, अप्पा सुद्ध विसुद्ध।
णोका भवदधि की सही, चेयण स्वच्छ प्रबुद्ध।।

।।इति णकार संपूर्णम्।।

आगे तकार का व्याख्यान करै हैं—

श्लोक

तत्त्वं तथ्य-प्रणेतारं, तारकं तापहारकं।
त्रिगुणं तीरदं तुष्टं, तूप-हर्म्यावलीयुतं।।

सोरठा

तमहर तपहर देव, तपधर गुणधर धीर तू।
तपसी धारैं सेव, है अछेव अति भेव तू।।

तोकौं नाथ विसारि, परधन परदारा गहैं।
ते इह जन्म मझारि, थुक थुक ह्वै नरका परैं।।

त्रोटक

तनतैं मनतैं अति दूर तू ही, तम नासक तूहि प्रकास कही।
तपनीय समान अमान सदा, तुव तुल्य न तप्त सुवर्ण कदा।।

तरणो जु तुही अर तारण तू, तप सागर आगर कारण तू।
प्रभु तू ही तटस्थ जु स्वस्थ सदा, तुझकौं नहि छाड़हि दास कदा।।

तलफूं अति नाथ बिना तुझ हूँ, दरसन्न जु देहु न और चहु।
इहाँ शुक्क तड़ाग समान भवो, गुण-सिंधु तुही जगदीश शिवो।।

तटिनी तट सीत जु काल हैं, तपकाल महैं गिर सीस रहें।
तरू कै तलि चातुरमास महैं, जु रहैं मुनिराय सु तोहि चहैं।।

तब ही उधरै भव सागर तैं, इह जीव महा दुख आगर तैं।
जब तूहि कृपा करि हाथ गहैं, प्रभु आधि न व्याधि उपाधि रहैं।।

तजियो नहि जाय सुवल्लभ तू, भजियो नहि जाप सु दुल्लभ तू।
तजिया सब तैंहि विभाव प्रभु, गहिया गुणरास सबैहि विभु।।

तनु पंचक तैं निरवर्त तुही, अविनश्वर ईश्वर धीर सही।
हुए तद्भव मुक्त तुझें हि भजें, भरमें भव में प्रभु तोहि तजैं।।

तुव दास क्रिया अर ज्ञान मई, अतिहि सुदयाल सुबुधि भई।
तरकारि हरी नहिं दास भखैं, सब त्यागि नु स्वाद धर्म रखैं।।

दोहा

तलवर ज्ञान विराग से, दंडै तस्कर मोह।
तू राजा अतिन्याय धर, काहू सौं नहिं द्रोह।।

त्रय गुणधारक देव तू, भेद त्रयोदश रूप।
चारित भासै धीर तू, मुनितारक मुनिभूप।।

त्रय वीसा विषया सबै, भवसागर के मूल।
सेयां त्रयतीसा उदधि, नरक भोग दुख थूल।।

तूहि प्रकासै नाथ जी, तेरे दास दयाल।
समदिट्ठि त्रय चालिसा, प्रकृति न बांधै लाल।।

त्रया पंचास जु भाव है, किया तेरेपन होय।
तू सब भासै लाल जी, शुद्ध स्वभाव जु कोय।।

तीर्थंकर चक्री हली, हरि प्रतिहरि अवनीस।
पुरुष तेरेसटिठ् उत्तमा, तू भासै जगदीस।।

त्रय अस्सी लख पूरवा, रिषभ रहे घर मांहि।
पाछैं मुनिव्रत धारि कैं, सिद्ध भये सक नांहि।।

त्राता तारक तात तू, त्यागी भोगी-देव।
ताप-हरन तारन तुही, दै क्रिपाल निज सेव।।

तार न तांति न तान नहि, गावै अद्भुत राग।
आतम रूप अनूप कौं, तू गायक बड़भाग।।

ताव तिहारी मोह जड़ , सहि न सक्यौं बलवान।
लुक्यौ भाजि भव वन विषैं, महादुष्ट छलवान।।

तामस राजस सात्विका, तेरै एक न कोय।
तू आनंद स्वरूप है, ज्ञान गुणातम होंय।।

ताड़न मारन कोइ कौं, तेरे मत में नाहिं।
तैं ताड़े रागादिका, दोष नाहिं तो पाहिं।।

ताल मजीरा झांझि अर, झालरि आदि अनेक।
बाजे बाजैं रावरे, तू है रावर एक।।

ताणैं शिवपुर कौ मुनी, ते तेरौ पथ लेय।
पंथ दिखावा एक तू, तो बिनु सर्व जु हेय।

ताव आदि रोगा सबै, हरैं तिहारो नाम।
रागादिक रोगा हरैं, तू सुवैद्य गुण-धाम।।

दोहा

तुव भक्ति बिनु ए ठगा, ठगे जांहि नहि नाथ।
तु ठगहर दुखहर प्रभू, दीनानाथ अनाथ।।

त्रय सत छत्तीस प्रभू, मतिज्ञान के भेद।
त्रय सत त्रेसठी मूढधी, पाखंडी अति खेद।।

तोहि जपै जगनाथ जी, ते उतरैं भवपार।
भुक्ति-मुक्ति दाता तुहि, अविनाशी अविकार।।

तू स्वद्रव्य पर्याय वह, स्वाभाविक निजरूप।
वस्तु भेद श्रुति नहि कहै, एक स्वरूप अनूप।।

तू ईश्वर वह ईश्वरी, तू समरथ वह शक्ति।
वह विमला तू विमल है, तू सुव्यक्त वह व्यक्ति।।

तेसैं तू निज परिणती, आपहि माहिं उपाय।
आपहि में लय करि प्रभू, धुव राजै जिनराय।।

बेसरी

तेरौ मंत्र जु पावै कोई, सो पावै शिव तोमय होई।
तू अनेक अर एक असंख्या, प्रभू अनंतानंतक संख्या।।

तो सम कमलाधर नहिं कोऊ, सर्व सुदायक तू हरि होऊ।
तेरी कमला भिन्न न कोई, एक रूप एकातम होई।।

कवित्त

तू अतिक्रांति विश्रांति दयाला, अरिहंता अति शांत मुनीश,
तिर-नर-सुर-खग मुनिवर कौं, मनहर इन चौरो अतिअवनीश।

सोरठा

तू ही आकार स्वरूप, सकल वर्णमात्रा तूही।
परमेश्वर जग भूप, दौलति करन जु तूही।।

तेलाकिक सब लेप, त्यागे अवधूता मुनी।
तू है देव अलेप, तोहि भजे मुनिवर महा।।

चौपाई

तू आकार रहित जगदेव, तू आधार बितीत अछेव।
सबकौ तू आधार दयाल, आश्रम सबकौ त्रिभुवन पाल।।

तू गरिष्ट अति सिष्ट प्रसिद्ध, गरिमा सागर अतुलित सिद्ध।
गरहारी तू गरल प्रहार, निरविष अमृत रूप अपार।।

भुजंगप्रयात

तिनौंने मुझै लूटि लीयौं जु चौरै, सुदौरा प्रसिद्धा त्रिलोकी हि दौरै।
अबै लेय भक्ति मदती स्वरूपा, करौ चौर चौपट्ट चौरा विरूपा।।

तुही जीवनाथा तुही जीवतारा, तु ही है दयापाल जैनी अपारा।
असंख्यात खेटा असंख्यात ग्रामा, जु तेरै तुही राव दीसै अकामा।।

तु ही आदरा और त्यागि सबै ही, मुन्यौं ने सबै सिद्धि पाई जबैं ही।
तुझैं छांड़ि जे मूढ़ सेवैं विषैं कौं, महा आतताई लहै हैं नाहिं जै कौ।।

दोहा

तात बतावै वस्तु निज, सतचित्त आनंद रूप।
रूप लखैं जर मरन की, नासै टेव विरूप।।

ता विमोह के मारवे, समरथ तेरे दास।
मोह डारि निज रूप कौ, जानै परम प्रकाश।।

मोतियादाम

तुही शिव सागर नागर धीश, तुहि जु निरीश्वर ईश्वर धीश।
तुही प्रभु ईश्वरता पति नाथ, अनादि अनंत अछेव असाथ।।

तुही जड़ता हर दोष वितीत, प्रभू निज ज्ञान स्वरूप अभीत।
तुही जगतात महासुख दात, महा अघ घातक देव विख्यात।।

भुजंगप्रयात

तु आनंद चाखा रहै नित्य चाखा, धरे ज्ञान चापा क्रिया बांण राखा।
करै चाकरी एक तेरीहि देवा, धरैं कौनकी नाथ तो टारि देवा।।

तुही चिद्विलासा सुचिन्मात्र तूही, तुही चित्प्रकासा चिदीशा विभूही।
विभू चिच्चिमत्कार चिंता वितीता, जु चिंतामणी चित्य दाता अतीता।।

तू त्रैकालिदर्शी सु त्रैलोकइशा, तु त्रैगुण्यरूपा अनूपा मुनीसा।
तू त्रैलोकिलोकि विलोके सबै ही,समयसार तूही सबै तो फवै ही।।

सोरठा

तू षट कारक रूप, षट करम जु तेरै नहीं।
तू षट द्रव्यनि रूप, षट कायनि कौ पीहरा।।

तू नहि आवै हाथ, छोछ पोल बातानि तैं।
तू मुनिगन कौ नाथ, योग धारि योगि भजैं।।

तोते सब हैं जेर, जेरज अंडज उद्भवा।
तू मरजादा मेर, सबकौ रक्षा ईशरा।।

तुझ दासनि पै नाथ, डूडू मैं हार्यो इहै।
तू अनंत गुणसाथ, वीतराग निरमोह तू।।

चाल

तोहि तैं जानहि भव्या, पावैं नहिं जाहिं अभव्या।
तू प्राज्ञः प्रज्ञाधारी, पाखंड निवारै भारी।।

अडिल्ल

तेरी भक्ति सु वन्हि, काठ ज्यों क्षय करैं।
कर्म कलंक सबै जु, भक्ति तैं अति डरै।।
तू भुवनाधिप नाथ, भुजंगाधिपती।
अति गति जीभ, सेस ध्यावै अती।।

इंद्रवज्रा

तोसों मिलि जे मुनिसिद्ध हुये, लीये न जन्मा कबहू न मूये।
कहैं जु मीनध्वज काम नामा, निःकाम तूही अतिधाम रामा।।

दोहा

तू साकार स्वरूप है, निराकार हू तूहि।
नराकार सब रूप तू, लोक प्रमाण प्रभूहि।।

तू सामान्य विशेष है, अस्ति नास्ति परकास।
नित्यानित्य अनेक तू, एक रूप अतिभास।।

तत् कहिये तातैं प्रभू, देहु भक्ति निह काम।
सर्व त्यागि तोकौं भजैं, ऐसी बुधि दै राम।।

तोहि भज्यां त्रिकुला भला, बिना भजन सब निंद्य।
निंदि कुला हु ध्याय कैं, हौंहि जगत करि वंद्य।।

तू सामान्य विशेष है, अस्ति नास्ति परकास।
नित्यानित्य अनेक तू, एक रूप अतिभास।।

तःप्रकास अतिभास तू, सब मात्रा में नाथ।
सर्वाक्षरमय धरि तू, गुण अनंत तुव साथ।।

तेरी नाथ जु अस्थिता तत्त्वतरंग स्वरूप।
सो गौरी धन संपती, दौलति ऋद्धि निरूप।।

मोतियादाम

तुही यम नेम जु आदि सबै हि, प्रभु वसु जोग विधी ही कहै हि।
तुही यम नासक मोक्ष प्रकाश, महा यत्नागर यत्न विभास।।

उपेन्द्रवज्रा

तत्वानुभूति लक्ष्मी ही सोई, बाह्या विभूति न विभूति कोई।
सुर्गापवर्गा सब देय तुही, भक्ता न चाहैं जु चहै प्रभू ही।।

तूहि विविक्त विवेद सुवेदा, जपहि यतीश्वर होय अभेवा।
सुविधि विधाता अविधि विनासी, विनय भूल अति धर्म प्रकाशी।।

नाराच

तूही जु सारथी प्रभू, चलावई स्वयंत्र कौ।
स्वभाव रूप यंत्र है, तुही धरैं स्वतंत्र कौ।।
न रावरे सुदास कौं, कदापि सांप काटई।
न रावरे जनानि कौं, भूपाल छापि डाटई।।

गाथा

तू क्षय कौ क्षय कारा, क्षति तल मध्ये हि सुपूजनी को तूही।
तूहि क्षमा धन धारा, रोगक्षयी नासका तू ही।।

तोहि क्षपाकर सेवैं, दिनकर सेवैं सुरिंद अति सेवैं।
तुव भजि मुनि शिव लेवैं, क्षमा धरा तूहि धरणीशा।।

तू क्षरिवैं तैं रहिता, अक्षर तू हि सु अक्षरातीता।
अति क्षपणक गण सहिता, क्षपक श्रेणी हि दाता तू।।

मंदाक्रांता

तेरी तुल्या गिरपति नहीं, सो जड़ो तू सुज्ञानी।
साधू शांता गिरि सिर तपैं, तोहि ध्यावैं सुध्यानी।।
काया माया गिनति न धरैं, तोहि सौं लौं लगावैं।
तू ही नाथा गिर पति प्रभू, है गिरानाथ ध्यावैं।।

।। इति तकार सपूर्णम्।।

अथ थकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

थकाराक्षर-कर्तारं, सर्वमात्रा-मयं विभुं।
वंदे देवेद्रवृंदार्च्यं, लोकालोक-प्रकासकं।।

दोहा

थ कहिये सिद्धांत में, भय रक्षण कौ नाम।
तू रक्षक है भय थकी, निरभै आतम-राम।।

थके कर्म तो ढ़िग प्रभू, लुके जु भववन माहिं।
थलचर जलचर नभचरा, तू पालै सक नाहिं।।

थक्यो बहुत हूँ नाथजी, भटकि भटकि भव माहिं।
थकैं चित्त तोमें प्रभू, सो करि ले निज पाहिं।।

थल में जल में नभ में हैं, तुही सहाय न और।
ऋद्धिकरन संकट-हरन, तू त्रिभुवन सिरमौर।।

थट्ट तिहारे पास है, गुण अनंत परजाय।
सदा अकेले तुम प्रभु, एक-रूप समुदाय।।

थण बहुती मातानि के, चूखे बहुती बार।
अब भवसागर तारि तू, तरण जु तारण हार।।

थाघ न आवै भवतणी, पारावार अपार।
थाह लहैं तेई प्रभू, दास हौंहि अविकार।।

थाह न तेरी पावंई, सुर-नर-खेचर-नाग।
मुनिगण धर हु ना लहैं, जे अनंत बड़ भाग।।

था न केवल बिन कहूं, तू कैवल्य स्वरूप।
दै केवल निज भाव प्रभू, शुद्ध बुद्ध चिद्रूप।।

थान मान धन धान प्रभू, तेरै एक न होय।
सब दाता सब रूप तू, निज स्वरूप निज सोय।।

थाती तेरै पासि है, और दरिद्री सर्व।
तूहि रमापति जगपति, हरै जगत कौ गर्व।।

थाल कटोरा त्यागि सहु, लेकर-पात्र अहार।
ते मुनि तेरौ ध्यान कर, पावैं भवजल पार।।

थाह तिहारी बिनु प्रभु, थाघ जगत कौ नाहिं।
दास करौं जगदीस जी, राखहु अपुनै पाहिं।।

सोरठा

थुति करिवे सक नांहि, इंद मुनिंद गनिंद हु।
बुद्धि न मेरै पांहि, कैसे मोसे थुति करें।।

थूणी पर की नांहि, दाबै जे तुव सूत्र सुनि।
ते दासनि कैं मांहि, आय महाभव जल तिरैं।।

थूणी पर की जेंहि, दाबै पापी दुष्ट धी।
जावैं नरक जु तेहि, भगति लहैं नहिं रावरी।।

थोरी बहुत कछून मैं, मूढ़ै भगति जु करी।
थोरी सम अति नून, सो तन पोख्यो अघमई।।

।। इति थकार संपूर्णम्।।

आगे दकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

दयामयं सुदातारं, दिनाधीशेश्वरं विभुं।
दीनबंधु जगत्-बंधु, दुष्टकर्म-निवारकं।।

सोरठा

दट्यो न मो पै काम, दलें न मैं कोपादि जे।
तूहि उधारै राम, सम्यक भाव लखाय कैं।।

दर्भ समान कठोर, तीखे रागादिक महा।
अतिदल बल छल जोर, मोहि भ्रमायौ जगत में।।

द्रव्य-प्रकाशक देव, सब द्रव्यनि में तू सिरै।
दै दयाल निज सेव, दया करौ प्रभु दीन परि।।

द्रव्य स्वगुण परजाय, भेद अभेद विभासई।
तू त्रिभुवन कौ राय, पाय परैं तेरैं मुनि।।

द्रव्य क्षेत्र अर काल, भाव भवा सब भासई।
तू अतिभाव कृपाल, लाल-ललाम जु लोक कौ।।

दशा भली ह्वै नाथ, साथ तबै तेरो गहै।
तू पकरै जब हाथ, तब कैसी चिंता रहै।।

दगड़ा लूटैं जेहि, दगादगी हिरदैं धरैं।
परैं नरक में तेहि, तोहि न पावैं पाप धी।।

दत्तव तेरो सौ न, तीन लोक में और कौ।
सठपन मेरौ सौ न, तोहि ध्यान रोर न हर्यौ।।

दहे करम भव रूप, गहै अनंता गुण प्रभू।
दबे तो हितैं भूप, दोष अनंता दुखमई।।

दही मही वसु जाम, आगै लेवो विधि नहीं।
नही दास कै काम, दही मही भेला द्विदल।।

शार्दूलविक्रीड़ित

दातारा नहि कोई दात्रि इक तू, देवै महा संपदा।
दाना अन्न जु आदि पाप दलना, टारैं सबै आपदा।।
दात्रीपात्र सुदान भेद सुविधि, भासै तूही और को।
दाता भुक्ति विमुक्ति देय इक तू, हारी महा रोर को।।

चौपाई

दाग लग्यो मोकौं प्रभू एह, मलिन महाधारी इह देह।
दाह ऊपनौं अति परचंड, त्रिस्ना कौ हूवौ न विहंड।।

दाह निवारै करइ शांत, तू ही एक परम अतिकांत।
द्वारौ तेरौ सौ नहिं और, द्वारै तेरै दीसे दौर।।

द्वारे तेरै संपति खरी, द्वारै तेरै नव निधि परी।
द्वारै सेवैं सुर-नरपती, फणपति खगपति अर जतिपति।।

दाब्यौ करमनि डाट्या अति, करौं पुकार सुनौं जगपति।
दाट्यो हौं मायानल मांहि, दावानल माया सम नाहिं।।

दाता दैं सन्तोष जु घना, जाकरि तो सौ लागै मना।
दानी ज्ञानी तू भगवंत, दारा पुत्र न तेरै संत।।

दाढ़ काल की तैं मुहि काढ़ि, द्राक हमारी भ्रांति जु वाढ़ि।
द्राक सीघ्र कौ कहिये नाम, द्राक उधारि देहु निज धाम।।

दोहा

दुग्ध कहा उज्जल प्रभू, तू उज्जल जगदीस।
नीरस भोजन लेय कैं, भजैं तोहि जोगीस।।

द्यूत मास मदिरा प्रभू, वेश्या अर आखेट।
चोरी नारी पारकी, ए तैरे मत मेट।।

देवल तेरौ ही सही, प्रतिमा तेरी पूजि।
जे देवल ढ़ौकै नहीं, जिनकै तोतैं दूजि।।

देस कोष धन धाम सहू, त्यागि भजैं भवि ताहि।
तू देसाधिपति प्रभू, देस असंखित होहि।।

देनहार तोसौं नहीं, देहु देहु निज वास।
देव-देव नरदेव तू, देह न गेह न वास।।

देह देहुरौ देव हैं, चेतन अतुल प्रभाव।
ताहि लखैं तुव भक्ति तै, ज्ञानी ज्ञान स्वभाव।।

देस ज्ञानमय ते लहैं, यामें संसै नाहिं।
नाथ तिहारी देसना, जे धारैं उरमाहिं।।

देहो दरसन करि कृपा, और न चाहैं तात।
देखैं तेरौ रूप अति, या सम और न बात।।

सवैया इकतीसा

देस त्यागि कोष त्यागि, रोस त्यागि दोस त्यागि,
तोहि में रहौं जु लागि, तेरौ ई जु होय जी।
छांड़े माया मोह सब, छांड़ो काम लोभ सब,
शुद्धरूप देखू तेरौ, ध्यान मांहि जोय जी।।

देह तैं जु नेह छांड़ि, कुटम सनेह छांड़ि,
तोहि ते सनेह करि, छांड़ौ दोष दोय जी।
शुभ औ अशुभ नाथ, त्यागि तेरौं गहो साथ,
तोहि कौ आराधौं देव, तू है एक कोय जी।।

सोरठा

द्वैता-द्वैत न कोय, तू अवाच्य द्वै रूप है।
देव अतुल गति होय, दैत्य देव सबहीं भजैं।।

द्वै नहिं तोमें दोष है, द्वै अधिका दश तप कहै।
तोहि भजैं जगदीस, तूई सुरधीसुर प्रभू।।

द्वै अधिका चालीस, नाम कर्म की प्रकृति है।
तोमें एक न ईस, प्रकृति परैं परवीन तू।।

द्वै अधिका पचास, देवल तेरै नाथ जी।
नंदीश्वर जु विभास, दीप आठमौं धारई।।

दोहा

द्वै अधिका सत्तरि प्रभू, कला जगत की होय।
तेरै पावै को जतन, ज्ञान कला है सोय।।

दोष-हरन दुख-हरन तू, दोषाहर जगदीस।
दोषा नाम जु रात्रि कौ, भ्रांति मई निस ईस।।

दोषाकर है चंद कौ, नाम संस्कृत माहिं।
चंद-सूर अर सूरि सहु, तोहि भजैं सक नाहिं।।

दोब समान गन्यौ मुझे, खोद्यो खुरपा होय।
कर्मनि अब कृपा करौ, हरै कष्ट प्रभु सोय।।

दौर्जन्यादिक अवगुणा, धारैं पापी मोह।
तुम सज्जन ऐसी करौं, करै नहिं इह द्रोह।।

देव चिदंकित नित्य तू, टारि सकल भ्रम जार।
हौं जु रुल्यो चिरकाल तैं, अब उधारि भव तार।।

दासनि कै निश्चै भयो, देव मात तुव भक्ति।
तुव दिक्षा शिक्षा बिना, देव मात नहि व्यक्ति।।

दैत्यांतक तुम देव हौ, दैत्यमात के शत्रु।
हमरी भ्रांति निवारि हौं, सब जीवनि कौ मित्रु।।

द्विज क्षत्री वणिक जु कुला, एहि जनेऊ लेहि।
शूद्रनि कौ लेवौ नहीं, यह आज्ञा गुरु देहि।।

।। इति दकार संपूर्णम् ।।

आगे धकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

धर्माधीशं धराधीशं, धातारं धिषणाधिपं।
शुद्धं बुद्धं सदा शांतं, धीरं वीरं धुरंधुरं।।

मालिनी

धरम करम भासै, धर्म कौ मूल तूही।
धरम अतुल तोमें, आत्मभावा समूही।।
धरम करण रूपा, धर्म है जीव रक्षा।
असति वचन त्यागा, नाथ तेरी जु पक्षा।।

धनपति पति तोकौं, कंठ सुद्धो जु गावै।।
धनपति नहिं तोसौ, तू धनी धर्म भावै।।
धन निज अनुभूति, और नाहीं विभूती।
अविचल धन तोपै, नांहि धारैं प्रसूती।।

धरणिधर अनादी तैं, धरैं शुद्ध भावा।
धनि धनि प्रभू तूही, है धरानाथ रावा।।
अतिगति धनपाला, तू ही है धर्म चक्री।
धनद विसद तूही, तोहि सेवैं जु चक्री।।

दोहा

धर्मनाथ धनत्याग को, धन-दाता धरमज्ञ।
अति धनाढ्य तू धवल है, धरमाध्यक्ष सुविज्ञ।।

धनुष ज्ञानमय रावरै, व्रत वान अघहार।
धनुरद्धर वरवीर तू, कर्म हरन अविकार।।

धक धक अग्नि स्वरूप तू, करमिंधन क्षयकार।
तूहि धनंजय नाथ है, पवन जीत बलधार।।

चौपाई

धन्वंतरि है वैद्य जु नाम, कर्मरोग हर तू अभिराम।
अतिरोगी हौं दुरबल महा, धज नांही जु विभावनि गहा।।

धड़क काल की कछु हु न रहै, जब जिय चरन सरन तुव गहै।
धाता ध्याता ध्यानी तू ही, ध्यान गम्य है तूहि प्रभू हि।।

धारणरूप ध्येय तू देव, ध्यावैं सुर नर मुनि अतिभेव।
धातु न गात न कर्म न कोई, तू चैतन्य धातु है सोई।।

धाम न गाम न ठाम न जोय, धारावाही सर्वग होय।
धा कहिये लक्ष्मी कौ नाम, श्रीधर श्रीवर तू अभिराम।।

धारक गुण-पुंजनि कौ तूहि, षट् कारकमय अमित समूहि।
धारा सम यह भव जलधार, याते वेगि उतारौ पार।।

धावत धावत भव-वन मांहि, खेद खिन्न हूवौ सक नाहिं।
निजपुर कौ दरसावो पंथ, धारहु बात देव निरंग्रथ।।

धिषण-धर तु अति बुधिवान, धिषण कहिये बुद्धि प्रवान।
तो बिनु धावैं अति गति मांहि, तोहि ध्याय तेरे पुर जांहि।।

धीमा धीमा गमन करंत, भूमि निरखि जे पाय धरंत।
ते मुनि शीघ्र सिद्ध पुर गहैं, तेरे मत करि तो में रहैं।।

धीठ करम दंडै तैं देव, धीधन धीर धरे तुव सेव।
धीजपतीज मोह की करैं, ते सठ परकति कै वसि परै।।

धुव तू ही अधुव संसार, तो बिनु कौन उतारैं पार।
धुव उत्पाद व्यया त्रय भेद, त्रिक रूपो तू एक अभेद।।

धूलि समान जगत की भूति, चिद्रूपा तेरी हि विभूति।
धूलि धूसरे मुनिवर धीर, ध्यावैं तोहि हरैं भव पीर।।

धूत न पावैं भूत जु नाथ, महाभूत ध्यावैं गुण साथ।
तेरी भक्ति गहैं तजि भर्म, सिर धूनैं तव सर्व जु कर्म।।

।। इति धकार संपूर्णम् ।।

आगे नकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

नत्वा नाभिभवं धीरं, ऋषभं ऋषिपूजितं।
नित्यं निरंजनं शांतं, नीतिमार्ग-प्रकाशकं।।

दोहा

नमों नमों वा देव कौं, चिदघन-आनंदरूप।
परम पुरुष परमात्मा, परमेश्वर जग भूप।।

नकारांक है ज्ञान कौ, नाम जु ग्रंथनि माहिं।
ज्ञानरूप ज्ञानी तूही, तौसम और जु नाहिं।।

नय उपनय भासै तुही, अनय निवारक देव।
नवधा भक्ति प्रकाश कै, करैं भव्य तुव सेव।।

नव तत्वनि कौ कथक तू, नवदस जीव समास।
भासै तूहि जु बीस नव, रतनत्रय-प्रकाश।।

नव अधिका प्रभू तीस हैं, ऊरध लोक निवास।
दास न चाहैं नाथ जी, चाहैं तेरौ पास।।

नव अधिका प्रभू चालिसा, नरक पाथड़ा होय।
परैं नरक में दुष्ट धी, भगति न धारैं सोय।।

नव अधिका पच्चास नर, पदवी त्रेसठि होय।
हुंडा तैं चउ नर घटै, पद घटियो नहिं कोय।।

नव अधिका सठि सौ परैं, बडै पुरष परवीन।
त्रेसठि इनमें आयया, जिन-मार्ग लवलीन।।

नव सैं विंजन नाथ जी, लक्षण सौ परि आठ।
तीर्थंकर धारैं सदा, जारै कर्म जु काठ।।

चौपाई

नवलरूप तू अतुलित वृद्ध, नगन दिगंबर धर्म प्रबुद्ध।
नग तो सम नहिं जग में और, नग दायक त्रिभुवन कौ मौर।।

नट सम जीव नच्यौ बहुरूप, तेरी भगति बिना जग भूप।
बह्यौ नदी आसा में नाथ, भवनद में डूब्यो जु अनाथ।।

नत कहियै जो नम्रीभूत, तोहि नवैं मुनिवर अवधूत।
तू न नवीन पुरातन नाथ, नमसकार तो कौ जगनाथ।।

नागपती गावैं गुण-गाम, नाकपती नावैं सिरराम।
नाना-दुख हर आनंदरास, नाटक भासक शुद्ध विलास।।

नारायण नारद कौ नाथ, नाव तुही तारै भवपाथ।
नाम तिहारौ जे नर जपै, तिनके पापकर्म सहु खपैं।।

न्यायशास्त्र कृत स्वामी तूहि, धर्म शास्त्र भासै जु समूहि।
नाकलोक-दायक तू ईश, शिव-दायक तू है जगदीश।।

नादवेद कौ भासक तूही, नादविंद कौ भेद जु कही।
नासाग्र जु धरि दृष्टि मुनीस, तोहि भजैं तू है अवनीस।।

नाहर हु तोकौं भजि देव, भये दयाल ज्ञानरस बेव।
निरमानी निरबानी नाथ, निरद्वंदी निरमोही साथ।।

निराबाध निकलंक दयाल, निरकल निरमल अति गुण साथ।
निरुकति निरुपम निर्गुण तुहि, गुणी गुणातम गुणपती सही।।

निरलोभी निरबंधी गुरु, निःकंटिक निरआयुध धुरु।
निरमद निरुत्तर निरधन धनी, निरजरपति पूजैं तजि मनी।।

निशेषामल शील निधान, निधि अनंत धारैं भगवान।
निरविकार निरवैर निराग, निसप्रेही निश्चय बड़भाग।।

निरविकलप निरहिंसक निस्व, निस्तुष निरभय नायक विश्व।
निरारंभ निहसल्य निकंप, तूहि निरंजन भजहि निर्लिप।।

निश्चय अर व्यवहार प्रकास, निरनायक निरमायक भास।
निरमायल निंदै श्रुति माहिं, निबल तणौ भीड़ि सक नाहिं।।

निखिल उपाधि रहित निज रूप, निहपरमाद निरासय भूप।
शुद्ध बुद्ध चिद्रूप अरूप, नभ निभ निरमल सर्वग भूप।।

निभ कहिये जु तुल्य कौ नाम, तेरी तुल्य न कोई राम।
माया निसिहर तू दिनकरो, जपै निसाकर तू तमहरो।।

नर्क निगोद कष्ट नहिं लहैं, तेरे दास सुवासहि गहै।
काल निसाचर पीरै नांहि, तुव दासनि तैं सब दुख जाहिं।।

दोहा

नव द्वारि कौं रोक सुर, काढ़हि दसम दुवार।
मन बांधै सुर रोकि कैं, योगा योग प्रचार।।

नीलांबर कहिये हली, हलधर पूजैं तोहि।
नीड नाम घर कौ सही, तेरै घर नहिं होहि।।

नींद भूख तेरै नहीं, दूषन भूषन नांहि।
नीलांबर तारक तूही, गुण अनंत तो पांहि।।

नीच जाति हु तोहि भजि, उच्च हौंहि सुखरूप।
उच्च जाति हु तोहि तजि, नीच हौहि दुखरूप।।

नुति-नति इन्द्रादि करैं, थुति जु करैं मुनिराय।
नुद नुद उर अंतर तिमर, ज्योतिरूप अधिकाय।।

नुद कहिये दूरि जु करौ, भ्रांति हमारी देव।
अनुपम निरुपम भक्ति दै, करैं निरंतर सेव।।

निरवृति परवृति विधि कहैं, राग-दोष द्वय नाहिं।
हरै नूनता जीव की, गुण अनंत तो माहिं।।

नूपर सम वाचालता, जौ लगि तो न लहंत।
तो हि लह्या अनुभव दसा, मौनरूप एकंत।।

मोतियादाम

नहीं जग ईश्वर तो बिनु कोय, हितू सबकौ प्रभू तू इक होय।
प्रभू परमेश्वर तू जु मुनीश, अनीश्वर श्रीश्वर तू अवनीश।।

दोहा

नाम उर्मिला नदिनि कौ, नदि सु परिणति होय।
तू चिद्रूप समुद्र है, अति गंभीर जु सोय।।

चौपाई

नरक पाथड़े हैं गुनचास, सातनि के अतिहि दुख त्रास।
तेरी भक्ति बिना जिय लहैं, दास न दुरगति कबहू गहैं।।

भुजंगप्रयात

नहीं चांट चूंटा जहां तु वसै है, नहीं चांदनी घाम तूही लसै है।
चिदानंद देवा सु चिद्रूप तूही, चिदाकाश चिन्मुद्र धारी प्रभु ही।।

सोरठा

नहीं दैन्यता नाथ, पीरैं जाकौं कब हु भी।
जाकौ पकरैं हाथ, तू बड़ हाथ अनाथ जी।।

नाम पूंछ कौ ख्यात, त कहिये आगम विषैं
सींग पूंछ बिनु तात, भगति रहित नर ढोर हैं।।

बेसरी

नौतन मंदिर रचैं तिहारा, प्रतिमा पधरावै गुनभारा।
उपकरणा मंदिर में स्वामी, जेहि चढ़ावै हौहि सुधामी।।

वसंततिलका

नाहिं डरै जु डरतैं नहि दास डहकैं।
तोकौं जु ध्याय मुनिराय कभी न बहकैं।।
जीवा परे जु जम डाढ़ महै प्रभू जी।
तेई बचैं जु नहि तोहि तजैं कभू जी।।

त्रिभंगी

नहि भानु जु और तुही रवि है, जग भास करो जु महाकवि है।
अति भाव तु ही मन भावन है, बड भाग तु ही अति पावन है।।

नहि भीत सकैं जु तुझै जन ए, तन है दुरगंध चला मन ए।।
नहि भीती विभीत सुदासन कौ, अति भीम तु ही अघ नासन कौ।।

दोहा

नित्य भजैं अह निसि भजैं, लग्यो तोहि सौं चित्त।
तोसों और न देखिये, तीन लोक में वित्त।।

नाम जनेऊ कौ कहैं, पंडित यज्ञुपवीत।
धारि जनेऊ ग्रहपती, त्यागैं सकल अनीत।।

नरकनि के दुख अकथ हैं, कहत न आवै थाह।
देह जनित मन जनित औ, क्षेत्रोत्पन्न अथाह।।

गाथा

निर्मल नभ सा दासा, ध्यावैं तोकौ प्रसन्न चित्ता जे।
ते केवल परकाशा, पावैं तेरे हि पर भावैं।।

त्रिभंगी

निरमल जो भावा, अति निरदावा,
अतुल प्रभावा, प्रभु इक तू।
सरवर अमृत भर, तप हर तप धर,
दुखहर सुखकर इक त्रिक तू।।

दोहा

नहिं सूरत्व स्वभाव है, मिथ्या दृष्टिनि माहिं।
डरै काल तैं मूढ़ ए, धीर वीरता नाहिं।।

निज रस अति मकरंद जो, पीवहि स्वरस छकेह।
भिक्षा लेकरि मधुकरी, तोही मांहि पगेह।।

।। इति नकार संपूर्णम् ।।

आगे पकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

परमानंदसंयुक्तं, पापापेतं महेश्वरं।
प्रियं पिनाकिना-संसेव्यं, प्रीत्याप्रीतिविवर्जितं।।

दोहा

परमतत्त्व परमात्मा, परमज्ञान परमज्ञ।
परमेष्टी परतर प्रगत, परमधाम अतिविज्ञ।।

परमरूप परमारथी, परमपुरष भगवान।
परमविद्य परतक्ष तू, परमहंस अतिज्ञान।।

परमदेव परसिद्ध तू, प्रजापाल दुख टाल।
परम पवित्रातम तुही, परम प्रताप विशाल।।

परिग्रह त्यागि मुनी भजै, परम ब्रह्म कौ रूप।
सो परब्रह्म विसुद्ध तू, आपहि आप स्वरूप।।

परम प्रीति दासा करै, परम प्रतीति जु धार।
पर देवो निज देव तू, परिणामी अविकार।।

परणति परणामनि थकी, कबहुँ नाहिं विभिन्न।
पक्षपात रहितो प्रभू, पक्षांतर प्रतिपन्न।।

परमोदय परवान तू, ह्वै प्रक्षीण जु बंध।
तोहि भज्यां निजपुर लहैं, तू है सिद्ध प्रबंध।।

परम प्रकाश प्रकाशको, अतुल प्रकाश विकास।
पद अंबुज सेवैं मुनी, मधुकर भाव विभास।।

पग पग निधि दासानि कै, दास निरीह निकाम।
तेरी पक्ष बिनु और पख, राखैं नाहिं विराम।।

पगे नहि विषयनि विषैं, पगे तोहि में धीर।
पणधारी तू पार कर, अपठपाठ अतिवीर।।

चाल

प्राणनि कौ रक्षक तूहि, ध्यावैं सब तोहि समूही।
जो पारणामिका भावा, सो निश्चै शुद्ध स्वभावा।।

दोहा

परचा प्रगट जु रावरै, तारे अमित अपार।
पत राखन दासानि की, तू जगपति अविकार।।

पदवीधर सेवैं तुझे, लहैं उच्चता सेय।
तूहि पदारथ परम है, तुव भजि तोहि लहेय।।

पवी कहिये प्रभू वज्र कौ, वज्री तेरे दास।
परतखि देव परोक्ष तू, भज्यां कहैं जमपास।।

प्रतिमा तेरी पूजि हैं, देवल तेरों पूजि।
प्रतिमा तैं विपरीत जे, तिनकै तोतैं दूजि।।

पल भक्षण सम पाप नहिं, यातैं करुणा नास।
करुणा बिनु कुगति लहैं, करुणा भगति प्रकास।।

पष्ट किये सब कर्म तैं, पुष्ट किये सब धर्म।
परम प्रफुल्लित वदन तू, अति प्रसन्न बिनु भर्म।।

प्रतिबिंबित तोमें सबै, तुव प्रतिबिंब जु पूजि।
दिढ़ जु प्रतिज्ञा धारि कै, पूजहि दास अदूज।।

प्रवचनसार जु है तुही, समयसार अविकार।
तेरौ प्रवचन सुनि प्रभू, पावहिं भक्ति विचार।।

पट-घट रहित जु सुधट तू, घट-पटादि परकाश।
दिगपट सेवहि तोहि कौ, तू है निपट विलास।।

पाः कहिये सिद्धान्त में, पान वस्तु कौ नाम।
अनुभव अमृत पान है, सौ तू पावै राम।।

पाता त्राता पालक जु, पाप निवारक देव।
पारस तू कंचन करैं, पातिग हरै अछेव।।

चाल

पशुयन दुरगति कौ पावै, पशुकरमी तोहि न गावै।
पशुकरमी मैथुनकारा, पशु करम जु मैथुन भारा।।

प्राणनि कौ रक्षक तूहि, ध्यावैं सब तोहि समूही।
जो पारणामिका भावा, सो निश्चै शुद्ध स्वभावा।।

पाखंडी तोहि न पावैं, तेरै मत तोमें आवैं।
सुखसत्ता अर चैतन्या, अवबोधादिक जे धन्या।।

प्राणनि कै प्राणा कहियै, इंद्रयादिक सो नहिं लहिये।
निश्चै प्राणा तू धारै, इंद्रीसुख दु:ख निवारैं।।

पारवती अर पशुपती भी, तोकौं ध्यावै गणपति भी।
पशुपती धारहि तुव सेवा, पशुधन पावै नहिं भेवा।।

पाछौ नहिं कबहू होई, तू अग्र अग्रणी सोई।
तू पाटधार जगराजा, अद्भुत जोग भवपाजा।।

पार्थिव सेवैं तुव पावा, पार्थिव कहिये नरावा।
है पाक सासनो इंद्रो, तेरौ दासा जु महेंद्रो।।

पावन ह्वै तोकौं सेयें, ह्वै पार भक्ति तुव लेयें।
पामर पावैं नहि भेदा, अध्यातम तूहि अभेदा।।

बेसरी

पिठर समान देह में जीवा, करम अगनि करि तपिउ सदीवा।
तेरी भगत हि तपति निवारै, परम शांतता भाव जु धारैं।।

पिता पितामह तू हि सबौं का, सुर-नर-विद्याधर जु मुन्यौं का।।
तू पिधान तैं रहित जु देवा, निरावर्ण प्रगट जु अति भेवा।

प्रिया पुत्र परिवार न तेरै, कमलापति निज परणति नेरै।
पिवहि जिके तेरी निजवानी, जित पीयूष अमर पद दानी।।

पिसै ज्ञान-जंत्रै सब कर्मा, लसैं अनंता आतम धर्मा।।
छकहि स्वरस में विकलप दूरा, थकहि आप में आनंद पूरा।

पिव पिव भव्या निज रस शुद्धा, जाकरि जीव होय अति बुद्धा।
ऐसै बैन तिहारे स्वामी, जे पीवै ते धन्य सुधामी।।

दोहा

प्रभू फटिक सारिसा, करे सुभाव निर्मला।
भजैं जु तोहि साधवा, सबैहि पाप दर्मला।।

प्रभू तुमही कृष्ण जु महा, कृष्ण भाव नहिं कोय।
कृष्ण पूज्य परमात्मा, तुम परमेश्वर होय।।

श्लोक

प्रणवं प्रथमं वंदे, यज्जिनेंद्रैक-शासनं।
सर्वाक्षर-प्रजा यस्य, राजते श्रुति-वर्द्धनि।।

चौपाई

प्रणवा सँकल ग्रंथ कै आदि, इह प्रणवा है तंत्र अनादि।
महामुनिश्वर यामैं लागै, याको पाय परम रस पागै।।

मालिनी

प्रभु तजि जग में जे, राचिया मूढ़ जीवा।
नहिं लहहि शिवंते, जन्म धारैं अतीवा।।
हरि भजि जग जीतैं, ते लहैं स्वात्म तत्त्वा।
जिन सम नहि कोऊ, और दूजौ स्व-तत्त्वा।।

प्रभु भजिहि सुभाजै, अंध कौ मोह नामा।
प्रभु भजिहि सभागा, त्यागि संसार रामा।।
प्रभु तजहि अभागा, तेहि अंधा न औरै।
प्रभु सम नहि कोई, वीर बैठौ जु चौरै।।

मोतियादाम

प्रभू सुर सप्त जु भासै तूही, तुझै प्रभु गावही देव समूही।
नहीं कछु राग तुही जु विराग, महा बड़भाग सदा अविभाग।।

त्रोटक

प्रभुतत्त्व सुरूप अरूप महा, तप भेद सबैं प्रभु तैंहि कहा।
प्रभु तथ्य निरूपक है परमा, तप धारि भजैं धरिकैं धरमा।।

उपेन्द्रवज्रा

प्रथ्वी रसा है तु ही भूपती है, भूमी समाधी तु ही दे यती है।
रसातलैं जाहिसु तेहि मूढा, जे तोहि त्यागे कुविधी हि रूढा।।

दोहा

पार न पहुंचे ज्ञान बिनु, ज्ञान भगति बिनु नांहि।
भगति दया बिनु नाहिं कहूं, दया मोम चित मांहि।।

।। इति पकार संपूर्णम् ।।

आगे फकार का व्याख्यान करे है —

श्लोक

फकाराक्षरकर्तारं, फलदातारमीश्वरं।
सर्वमात्रामयं धीरं, वंदे देवं सदोदयं।।

नाराच

फवैहि सर्व तोहि कौं, दबैहि मोह तोहि सौं।
किये अनंत पार तैं, टरे मति हि मोहि सौं।

फलाल है जु तोहि तैं, अनश्वरा अनंत जी।
विभुक्ति मुक्ति दाय को, तुही त्रिलोक कंत जी।।

फलै न कर्म पादपा, जबै अज्ञान दुष्फला।
करैं हि दास दग्ध बीज, रूपता हि निष्फला।।

फणाधिपा सुराधिपा, नराधिपा तुझैं भजैं।
अनादिकाल के जु कर्म, दास तैं परैं भजैं।।

फटै न फूटई कभी, स्वभाव भाव जीव कौ।
तुही कहै इहै स्वरूप, नाथ है सदीव कौ।।

फला दला न फूल कंद, रावरे जना भखैं।
तजैं हि जीभ स्वाद कौ, दयाल भाव ते रखें।।

फणी जु काल रूप है, डसे न नाथ दास कौ।
फंसै न मोह में मुनीस, छांडि नाथ पास कौ।।

फंस्यौ अनादि काल कौ, सुआतमा फसाव में।
निकास होइ तौहि तैं, जु आवई स्वभाव में।।

त्रिभंगी

फाकी तेरै सूत्र की, हरै अनादि रोगनि कौं,
फकै माया मोह को, सुचूरण स्वरूप जो।
जीव के असाध्य रोग, जन्म जरा मृत्यु सोग,
सब ही नसावै देव, ऐसी है निकूप जो।।
याकौ करे सेवन जु, साधु सब बाधा जीत,
याकौ जस गावै सुर, नाग नर भूप जो।
दोष सब कटै यातैं, तेरौ ई प्रसाद इहै,
औषध कौ दायक तू, वैद है निरूप जो।।

फाकी लेय औषध की, पथ्य जे रहैं सदीव,
अभख अहार त्यागि, तजैं जु कषाय को।
जीभ वसि राखै अर, नारी सौं न नेह राखें,
अल्प अहार लेय, राखैं दिढ़ काय कौ।।
तबै रोग कटै नाथ, कबहूँ न करे साथ,
कल्पकाय होय जीतु, पित्त कफ वाय को।
बहुतनि कौं रोग हर्यो, इह जाची औषध जु,
फाकी देहु याकी देव, हरैं जु अपाय कौ।।

दोहा

फागुन कार्तिक अर प्रभू, मास आषाढ़ हु माहिं।
शुक्ल पक्ष त्रय मास में, वसु दिन व्रत कराहिं।।

फिर्यो अनंती जोनी में, तो बिनु दीन दयाल।
अब फिरिवो सब मेटि तू, दै निज ज्ञान विशाल।।

फिरि फिरि बिनऊ नाथ जी, भ्रमण न फिरि फिरिक
ह ा ट ा ।
सो निजवास दयाल जी, देहु कृपा करि सोय।।

फुटकर गुण तेरे नहीं, गुण अनंत इकरूप।
फूति फाटि नहिं गुणनि में, शक्ति अनंत स्वरूप।।

फूलि धरैं भव भाव में, मूरिख लोक अयान।
फूलि धरै तुव भक्ति लहि, ज्ञानवंत गुणवान।।

फूल पान नहि जोग्य है, ब्रह्म व्रतिनि कौ देव।
ब्रह्मचर्य के शुत्र ए, त्यागहि दास अभेव।।

फूस तुल्य भव भोग ए, कण रहिता जड भाव।
चाहैं पशु सम नर तिनैं, दासनि कै नहिं चाव।।

फेन तुल्य भव भूति जो, जिनकै नांहि उपाय।
चाव एक तुव भक्ति कौ, दास धरैं अति भाव।।

फौरी जु मोहादिकनि की, मेटें तेरे दास।
फौज त्यागि ह्वै एकलै, काटें कर्म जु फास।।

।। इति श्री फकार संपूर्णम्।।

आगे बकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

बर्धमानं महाबाहुं, विश्वविद्याकुलगृहं।
वीतरागं विनिर्मोहं, बुद्धं शुद्धं प्रभाधरं।।

छंद त्रिभंगी

बक सम कपटी जे, धन झपटी जे,
अघ लपटी जे, तुव न लहैं।
मुनि हंत समाना, कपट न जाना,
उज्जल ज्ञाना, तुव जु गहैं।।

दोहा

ब्रह्म योनि निरयोनि तू, वध बन्धन तैं दूर।
ब्रह्म वचन प्रतिपाल तू, आनंदी भरपूर।।

बाद-विवाद न तो विषैं, बाह्याभ्यंतर एक।
बहिरात्म पावैं नहीं, तू एको जू अनेक।।

बाग सघन तुव गुणनि कौ, तासम और न कुंज।
कुंज बिहारी देव तू, रमैं अतुल गुण पुंज।।

बापी सरवर नहिं तटनि, तेरे पुर में नाथ।
सुख सरवर नरवर तु ही, गुण-समुद्र अति साथ।।

ब्याह बिना नारी सकल, तू वरजै जगनाथ।
ब्याहत नारी हू तजै, तब पावै तुव साथ।।

बासी भोजन जे भखै, ते न लहै तुव भक्ति।
भक्त न श्रुति वर्जित गहैं, विषयनि में नहिं रक्त।।

ब्याल नाम है दुष्ट गज, ब्याल नाम है नाग।
अहि न डसै गज हु नसै, तुव दासा बड़भागि।।

बिनजारौ निरवान कौ, मौटौ सारथ वाह।
बिनज निजातम वस्तु कौ, तेरै अतुल अथाह।।

ब्याघ्रादिक लखि दास कौ, दास हौंहि तजि गर्व।
सुर नर असुर जु खेचरा, दासहि सेवहि सर्व।।

वास रहित तू वसि रह्या, निश्चै आपुन मांहि।
व्यवहारें सब ज्ञेय में, तूहि बसै सक नांहि।।

बासुदेव पूजित तु ही, बासुपूज्य जगपूज्य।
व्याकरणादिक भास तू, अव्याक्रत जग दूज्य।।

बारी तेरी फलि रही, जाकै बाड़ि न कोय।
फल पावैं प्रभु तोहि करि, तू फलदायक होय।।

बिगरि बात सुधारि तू, तो बिगर न कहु चैन।
बिक्यो अचेतन हाथ हूँ, अब दै सम्यक् नैन।।

।। इति बकार संपूर्णम् ।।

आगे भकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

भव्यांभोरुहमार्तंडं, भानुकोटिजितप्रभं।
भिन्नं रागादिभिर्भीति, नाशनं भुक्तिमुक्तिदं।।

दोहा

भव्यनि कौ तारक तु ही, भव सागर की पोत।
भर्ता-त्रिभुवन कौ प्रभु, जाकै गात न भोत।।

भयहारी भगवंत तू, श्री भगवान सुजान।
भद्र भद्र कृत भरित तू, ज्ञान भवन गुणवान।।

भलौ तुही भजन जु किया, भव तारै बड़हाथ।
तुही भवांतर भम्र हरै, करै भलाई नाथ।।

भव तेरौ हु नाम है, होय स्वभाव स्वरूप।
तू भदंत गुणवंत है, भगत वत्सल शिवरूप।।

भगति तिहारी भवि करैं, अभवि न पावैं भक्ति।
भुक्ति-मुक्ति की मात जो, दै निज भक्तिसुव्यक्ति।।

भर्म नाम कंचन तनौ, कनक कामिनी त्यागि।
भगति करैं मुनिवर महा, एक तोहि में पागि।।

भद्रिक परिणामी लहैं, कुटिल लहैं न तोहि।
गुण भरिता ह्वै तो भज्यां, दै सेवा प्रभु मोहि।।

भी कहिये भय कौं प्रभु, तूहि अभी भयहार।
भीरु नाम कायर तनों, दास अभीरु अपार।।

भीनें तो मैं जोगिया, भीतरि बाहिर एक।
भीख जु मांगे तोहि पैं, शुद्ध स्वरूप विवेक।।

भीर परैं नहि दास कौ, तूहि सहाई नाथ।
भील हु तो जपि सदगती, पावैं तू बड़हाथ।।

भींच्यौ मोहि अपार जी, तनु जु यंत्र में डारि।
मोह महा निरदय मिल्यौ, अब भव संकट टारि।।

त्रोटक

भव भंजन तू भवि रंजन है, भरतादि तार निरंजन है।
भय कौं भय कारिज ईश तु ही, भणियों न भणायउ पंडित ही।।

भगवान बिना दुख कौन हरै, भगवंत तू ही भवपार करें।
भकभूर करै अघकर्म तु ही, भरपूर तु ही सुख पिंड जुही।।

अडिल्ल

भुवनेश्वर जगराय, छुड़ावै मोह तू।
है त्रिभुवन कौ तात, रह्यौ अति सोहि तू।।

भुक्ति-मुक्ति दातार, भक्ति दै रावरी।
लगी अनादि की देव, भ्रांति हरि बावरी।।

भुगतैं बिनु छुटैं न, कर्म शुभ अशुभ जो।
जग में जीवनि कै जु, लगि रहे सुलभ जो।।

भुक्ति कहावैं इंद्र, पदी सुख वासना।
दास जु चाहै भक्ति, मुक्ति तैं कामना।।

भुक्ति फणिंद पदी हु, चक्रि पदई प्रभु।
तेरे दास गिनैंहि, निकम्मी सहु विभु।।

भुवन मांहि तुव कीर्ति, तुही है अति गुना।
तोहि जपैं बड़भाग, मुनसर तत चुना।।

भय कौं तूहि भयंकरा, काल हू कौ भयरूप।
मोहादिक कौ रिपु तूहि, तातैं भैरव भूप।।

भजन बिना अति तप करैं, तोउ कर्म न हनेय।
भजन सहित तप आदरै, भवजल कौ जल देय।।

सोरठा

भू पृथ्वी कौ नाम, भू कहिये उपजै जिकौ।
पृथ्वीपती तू राम, उतपति मरण न रावरै।।

भूत सुमंगल नाम, मंगलकारी तू सदा।
भूत आतमाराम, तू परमातम जीवपती।।

दोहा

भूख अतुल तरषा अतुल, मिलै न कण इक अन्न।
बूंद मात्र वारि न मिलैं, है नारक अति खिन्न।।

।। इति श्री भकार संपूर्णम्।।

आगे मकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

महादेवं महावीरं मानमायादि दूरगं।
मिथ्यामार्ग-निहंतारं, मीनध्वज-निपातकं।।

मुक्ति-मूलं महाधीरं, मेधापारं सदोदयं।
मैत्र्यादि भावनारूपं, मोह-रागादि-वर्जितं।।

मौनारूढं महाज्ञानं, मंगलं विश्वपारगं।
मः प्रकासं चिदाकाशं, वंदे वीरं शिवाधिपं।।

चौपाई

महाज्ञान मतिवान जु मुनी, जपै तोहि तू है अति गुणी।
महाराज सरणागत पाल, पतित उधारन दीन दयाल।।

महा-ऋद्धि अति-सिद्धि निवास, मन-बुद्धि कै जु परै अति भास।।
रटहि महेन्द्र नरेन्द्र खगेन्द्र, महित महापति तूहि मुनेंद्र।।

महा महेश्वर अति मरमज्ञ, महाप्रभु सुविभू अति विज्ञ।
मरमी धरमी देव महंत, महीनीति धारी भगवंत।।

मनुपती मुनिपती जगपती जती, करहि मनीषी सेवा अति।
नाम मनीषा बुद्धि जु कहैं, महाकांती जु तोकौं मुनि चहें।।

महामहीप मही कौ धनी, महिमा सागर नागर मुनी।
महामहेश जिनेश नरेश, जपहि सुरेश ऋषेश अशेस।।

मन मरकट कै रौधकसाथ, मदनांतक अति मगन अबाध।
महामंत्र तेरौ उर धरैं, महापद्म पद्मा तुही वरैं।।

नाराच

महातमा महा कलेश, नाश कौ महाप्रभू।
महागुणी गुणाकरो, युगादि देव है विभू।।

महा जु कर्म नासनो, महेषता धरो हरो।
महामनोहरांग है, महागुरु रमा वरो।।

मलाहरै कलाधरै, मनोज दण्ड कौ महा।
न मत्सरी लहै जु, जाहि ज्ञानवंत ने लहा।।

मलीन सामना, मलीन ना लहै अनंत जो।
मनुष देव दानवां, भजैं अनादि कंत जो।।

मरुस्थली दुनी मंझार, वारि दो अघेव सो।
सदा सु सर्व मध्य है, महोत्तमो अभेव सो।।

महाकृति निराकृती, महा सुलक्षि दायको।
मया करो दया करो, अनामयो असाय को।।

चाल

मुनि पादमूल तुव सेवैं, तोकौं भजि शिवपुर लेवैं।
मैं महापातकी मूढ़ा, सेये पापी अति रूढ़ा।।

दोहा

मठ मंडप में मुनि बसैं, जपै तोहि दिन राति।
मगन दशा दासानि की, अतुलित अचल लखाति।।

मगरमच्छ सम मोह है, भवसागर के माहिं।
तो बिनु पार न पाइए, तू तारक सक नाहिं।।

मकरध्वज मनमथ मदन, कहैं काम के नाम।
काम मनोभव है सही, कामजीत तू राम।।

मलिन भाव सब ही हरौ, मघवा पूजित तू हि।
मधु मांसादि निषेध कौं, मधुसूदन जगदूहि।।

महिषीइंद्र तनी सदा, जपै तोहि कौ ईश।
महल न महिला रावरैं, तू जोगी जगदीस।।

मल्ल मोह हारी तुही, मल्लनाथ जगनाथ।
अतिबल अतिदल अचल तू, गुण अनंत तुव साथ।।

मल मूत्रादि भर्यौ इहै, देह अपावन निंद्य।
तोहि छुवै कैसे प्रभू, तू अनिंद्य जगवंद्य।।

मदिरा सम मत्ता इह, मोह भयी अघरूप।
तूहि निवारै जगगुरु, रमता राम अनूप।।

मालिनी

माया काया, नाहि जाया जु तेरै।
मारो कामो, नाहि तेरै जु नेरै।।
मातंगी जे, पूजि हिंसा जु धारा।
ते तोकौं न, पांवही धर्म हारा।।

मार्गो तूही, मार्गणा तूहि गावैं।
मानी जीवा, तोहि नांहि जु पावैं।।
मातंगा हू, तोहि ध्याय जु देवा।
होवैं तेरी, शक्र धारैं हि सेवा।।

मात्रा गात्रा, नाहि छात्रा जु तेरै।
माया जालो, नाहि तेरे जु नेरै।।
माता ताता, नाहि भ्राता हु तेरै।
मा लक्ष्मी जो, शक्ति तेरै हि नेरै।।

मानी नाही, तोहि पावै कदापी।
मारैं जीवा, ते न पावैं जु पापी।।
मांसाहारा, नांहि भक्ति जु धारैं।
तेरे दासा, जीव हिंसादि टारैं।।

माला फेरैं, नाम तेरौ जु लेवैं।
ग्रहस्था जे, दान च्यार्यों हि देवैं।

साधू ध्यानारूढ़ ह्वै तोहि ध्यावैं।
योगारूढ़ा, अंतरात्मा जु गावैं।।

चौपाई

मास मास उपवास जु धारि, साधु तपोधन तत्त्व विचारि।
भजैं तोहि तजि जग परपंच, तो बिनु सर्व गन्यौं जग रंच।।

माहिर सबकौ तू जगराम, तेरे माहि रहै मुनिराय।
जग जन तोह न जान सकैं हि, बिनु जानैं भववन भटकैं हि।।

माल न तोसौ त्रिभुवन मांहि, अविनासी तू अति गुन माहिं।
अति माधूर्य बैन तू कहै, तोहि महामुनिवर अति चहैं।।

मितभाषी तू अमित अपार, मिष्ट वचन तेरे अतिसार।
मित्र न तोसौं जग में और, तू मिथ्यात हरन जग मौर।।

मिश्रभाव तो में नहि नाथ, तू केवल निजरूप अनाथ।
मिलै न मिल्यो मिलि है तुव माहिं, परपंच जु तेरै कछु नाहिं।।

मिलि जु रह्यौ सब ही सौं तूहि, सकल व्यापको लोक प्रभूहि।
अमिल मिलापी तूहि दयाल, मिलैं मुनिनि सौं तूहि कृपाल।।

इंद्रवज्रा

मिटै मिटायो कबहु न स्वामी, नाथ अखण्डा अति ही सुनामी।
तेरौ मिलाप कबहू न छूटै, तूहि मिलापी कबहुँ न टूटै।।

मित्रा जु तूही प्रमिताक्षरो है, विशुद्ध भावो परमाक्षरो है।
मिल्यौ न तोसों यह जीव पापी, तातैं रूल्यौ जू अति ही संतापी।।

बेसरी

मद्य मांस सम और न निंदा, करुणा सम और न जग वंद्या।
एण नेत्र सम नारी नेत्रा, लखि करि डिगैं न इंद्री जेत्रा।।

सोरठा

मौहे जीव अपार, मोह करम ने नाथ जी।
तूहि उतारै पार, पारकर परतक्ष तू।।

मोसे जीव अपार, कैसे मैं तिरि हौं प्रभू।
तूहि करै निसतार, मोसे पापिनि कौ महा।।

मौलि मुकुट कौ नाम, मुकुट जगत कौ तू सही।
मौड सकल कौ राम, मौज न तेरी सी कहूं।।

मौजी तो सम और, तीन लोक में नाहिं कौ।
करै करम कौ चौर, मौर्वी चाप न रोप ना।।

मौनारूढ़ मुनीश, ध्यावै मंगलरूप तू।
मंत्र मूरती ईश, मंत्र न तंत्र न यंत्र ना।।

मंगलकारी तूहि, मंता संता कंत तू।
मंद न तूहि प्रभूहि, मंदमती तोहि न लखैं।।

मंदिर गुण कौ ईश, सीस जगत कौ तू सही।
मंगलीक जगदीस, मंडन त्रिभुवन कौ महा।।

मंडै व्रत अनादि, खंडै अव्रत कौ तुही।
गुणमंडित तू आदि, तो बिनु वादि सबै जगत।।

मुंचि न मोकौ नाथ, मंक्षु उधारै भव थकी।
जग जीवन अति साथ, अंजन मंजन रहित तू।।

मंद कषायी जीव, भक्ति भाव सोई लहै।
तीव्र कषाय अतीव, धारै सो तोहि न लहै।।

मः कहिये श्रुति मांहि, शिव कौ नाम प्रसिद्ध है।
तो बिनु और जु नांहि, शिव शंकर जग गुरु तु ही।।

म: कहिये फुनि चंद, त्रिभुवन चंद मुनिंद तू।
सेवै इंद नरिंद, तोहि फनिंद मुनिंद हु।।

म: मेधा को नाम, तूहि विधाता विधि करै।
पूरब बंध जु राम, काटै तू औरेन कौ।।

दोहा

मलिन नीर मिलि सिंधुसौं, निर्मल भाव धरेय।
जीव ध्याय जगदीस कौं, कर्म कलंक हरेय।।

मन वसि करि ध्यावैं तुझै, आतमरूप विचार।
लहहिं परम समाधि कौं, योगीश्वर विहार।।

मोह जीतिवे सक नहीं, सुरनर खेचर नाग।
जीतैं तेरे दास ही, निह कामा बड़ भाग।।

मोह जीति तजि कुमति तिय, सुमति धारि सुखदात।
मिलिकैं भक्ति सु मात सौं, लहै परम गुर तात।।

मुनि सुरपति अहपति भज्यां, तू ऊंचौ नहिं नाथ।
ते ऊंचा ह्वौ तो जप्यां, तू अनंत गुन साथ।।

मोहि ठग्यो मोहादिनि, डारि ठगोरी सीस।
इहै ठगोरी भ्रांति है, तारै जगत अधीस।।

त्रिभंगी

मुनि है बनवासा, तजि घर वासा,
विविध बिलासा तोहि जपैं।
लखि सब में तोही, ह्वै निरमोही,
तोहि जु तोही, साध तपैं।।

।। इति मकार संपूर्णम् ।।

आगे यकार का व्याख्यान करे हैं —

श्लोक

यशोराशिं महाबाहुं, याञ्चा-सर्वपूरकं।
यियासारहितं नित्यं, निश्चलं लोकवत्सलं।।

दोहा

यदा कहावै जास मैं, तोहि भजैं मुनिराय।
तदा कहावै तासमैं, भ्रांति न एक रहाय।।

यत् कहियै जातैं प्रभू, भजैं तोहि जग त्यागि।
जग असार तू सार है, तोमैं रहिये पागि।।

यस्य कहावै जाहिकै, उर निवसै तू देव।
तस्य कहावै ताहिकै, ह्वै आनंद अछेव।।

यस्मिन कहिये जाविषैं, तेरी भक्ति जु नाहिं।
तस्मिन् कहिये ताविषैं, गुण गण नाहिं रहाहिं।।

याज्ञक साधु मुनीश्वरा, यज्ञ तिहारौ ध्यान।
यश तो सम और न धरैं, यशी न तो सम आन।।

यथाख्यात चारित्र दैं, नाथ तिहारी भक्ति।
केवलदाता भक्ति है, भक्ति धरें अति शक्ति।।

मोतियादाम

यथा प्रभु अंध अधार सुयष्टि, तथा भवि कै तुव भक्ति हि इष्टि।
न नारक यातन दास लहैं हि, न याचन सुर्गहु की जु करैं हि।।

दोहा

या कहिये जु विधात कौं, तू हि विधाता देव।
या तेरी परिणति सही, चिद्रूपा अतिभेव।।

यावत तोहि न पावंही, तावत भव भ्रम होय।
यावत कहयैं जोलगै, जीव न उधरे सोइ।।

याभ्यां कहिये दोय करि, रुलैं जीव संसार।
राग-दोष दोऊ अरि, जीतैं मुनि अविकार।।

यी इह चउयी मात्रिका, तूहि प्रकासै देव।
धरे अव्ययी भाव तू, अक्षयरूप अछेव।।

युक्ति प्रकाशक वस्तु तू, युगाधीर युगधार।
युग कहियै द्वै कौं सही, तू द्वयरूप अपार।।

युगलरूप अतिरूप तू, युगम भाव अतिभेव।
निराकार साकार तू, दरसन ज्ञान अभेव।।

युग युग तेरौ आसिरो, नाथ युगादि अनंत।
युक्तायुक्त विभेद सहु, तूहि विभासै संत।।

युष्माकं कौ अर्थ इह, तुम्हरै नाहिं विकार।
अस्माकं कौ अर्थ इह, हमकौ करि भव पार।।

।।इति यकार संपूर्णम्।।

आगे रकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

रजोहरं रमानाथं, राजराजेन्द्रसेवितं।
रिक्तता-रहितं पूर्णं, धर्मरीतिप्रकाशकं।।

उपेन्द्रवज्रा

रक्षा बतावै सब जीव को तू, प्रीति छुड़ावै जु अजीव की तू।
रती हू मात्रा नहि भ्रांति जाकै, तोमें रच्यौ जु भविजीव ताके।।

रचै न तू ही भव भ्रांति मांही, तौसौ रचैं जे अभव्या सु नाहीं।
तोकौं रच्यौं ना किनही कदापी, तू ही अनादी प्रभु है उदापी।।

दोहा

रत्नपती पूजैं चरन, रत्नगर्भ भगवान।
रतनेश्वर अति रत्नधर, रत्ननता सम आन।।

रमन रमा कौ जो प्रभू, रति अरति न एकोहि।
अति सुशील जगदीस जो, अविचल सुविवेकोहि।।

रमणी कौ रस मूल तू, रमि जु रह्यो सम माहिं।
रमैं आप मांहि तुही, रज रहितो सक नाहिं।।

रव कहिये उच्चार कौं, नाम उच्चारे तेहि।
रहसि लहैं निजरूप कौं, भवजल कौं जल देहि।।

रा कहिये धन को सही, निज धन तुही जु आदि।
राग रहित अविकार तू, राम सुनाम अनादि।।

रामा तेरै नांहि को, रमा न रामा होइ।
रमा रावरी शक्ति है, राधा कहिये सोई।।

राधा दूजी नांहि कौ, निज सत्ता है जोइ।
शिवा आर्हती शक्ति जो, सो गोपी हू होइ।।

राका पूरणमासी है, राका कौ ह्वै चंद।
राय न तो सम दूसरौ, रावर एक प्रभूहि।।

राचै तो मैं जोगिया, रारि भारि सब त्यागि।
रासि गुण नि की तू सही, रहिये तो में पागि।।

राजस तामस सात्विका, तू धारै नहिं एक।
निज स्वभाव राजिंद तू, धारै अतुल विवेक।।

राष्ट्र देस जु नाम है, देस असंखित होय।
तेरे लोक प्रमाण तू, ज्ञान मात्र है सोय।।

सोरठा

रीता रहै न दास, भरितावस्थ स्वरूप ह्वैं।
तू पूरण गुण रास, तो सौ तू हि जु और ना।।

रूढ़ अविद्या रूप, तेरै दास न आदरै।
ह्वै तोसौं इकरूप, ध्यावै अह-निसि निज विषैं।।

रेचक पूरक और, कुंभक तूहि प्रकासई।
सब योगिनि कौ मौर, योग सिद्ध परसिद्ध तू।।

रेत समान विभूति, जग की तजि योगीश्वरा।
पावैं निज अनुभूति, तेरी भक्ति प्रसाद तैं।।

रे रे चित अयान भजहु, भजहु जगदीस कौं।
धारहु क्यौं न सयान, जाकरि भव भरमण मिटै।।

रे रे लंपट जीव, विषयनि में लपट्यौ कहा।
क्यों न भजैं जगपीव, जा करि निजरस पाइये।।

रोर दरिद्र जु नाम, रो भय कौ नाम जु कहे।
तू दरिद्रहर राम, भय कौं तूहि भयंकरा।।

रोग महारागादि हरैं, तूहि अति वैद्य तू।
रोप न चाप अनादि, धनुरद्धर तू अद्भुता।।

रोकि रहे भव मांहि, मोहादिक राक्षस महा।
तेही तुव पुर जांहि, जे इनकौ नासै मुनि।।

रोग न दोष न राग, तेरै तू अविकार है।
वीतराग बड़भाग, तेहि जेहि तोकौं भजैं।।

चौपाई

रे मन तू मेरौ परधान, जो तोतैं भेटौं भगवान।
अनुचर कौ यह धर्महि जान, स्वामि काम कौं त्यागैं प्रान।।

दोहा

रमा शुद्ध सत्ता महा, द्रव्यगुणातम-रूप।
चिन-मुद्रा निज शक्ति जो, गौरी अतुल अनूप।।

रमैं चरन पंकज विषैं, तातैं दासा देव।
तिनकी रक्षक भक्ति ही, सुरमाता श्रुति एव।।

गीता

राग दोषा मोह भावा, ए जु औपाधिक सही।
तू न औपाधी कदापि, है उदापी गुरु कही।।

।। इति रकार संपूर्णम्।।

आगे लकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

लोकनाथं महाशांतं, लौल्पतारहितं सदा।
लंपटैर्न क्वचित् लभ्यं, लिंगरूपादि वर्जितं।।

उपेन्द्रवज्रा

लक्षोअलक्षो अति लक्षणाढ्यो,लक्ष्मीनिवासो अति ही धनाढ्यो।
आनंद लक्ष्मीपति लोकनाथा, लक्ष्मीस्वरूपो लक्ष्मी हि साथा।।

मंदाक्रांता

लक्ष्मीनाथो ललित अति ही, है ललामो त्रिलोकी।
चौरासी जे लख दुखमई, जोनि तैं भिन्न लोकी।।
चौरासी तैं वहहि जु प्रभू, काढ़ई भव्य जीवै।
जाको नामा निज रस मई, साधु लोका जु पीवैं।।

दोहा

लहलहाट अति ज्योति तू, झलझलाट तू देव।
लसै महा दैदीप अति, दै दयाल निज सेव।।

लट्यो फट्यो इह जीव अति, लुट्यो जु भव-वन माहिं।
लूट्यो मोह निसाचरैं, गुण-हरिया सक नाहिं।।

चौपाई

लगे रहें तेरे दरबार, तेई तत्त्व लहैं अविकार।
लघु दीरघ कौ भेद न कोई, जपै तोहि सो तेरा होई।।

लरिवौ भरिवौ जग सौं त्यागि, क्षमारूप ह्वै समरस पागि।
तेरे होय लहैं निज वस्तु, लब्धि मूल तू रोर विधस्तु।।

लपिवौ रटिवौ तेरौ नाम, केवल लभ्य तुही अतिधाम।
लसित महा सोभा कौ पुंज, दीसै तुही सघन गुण कुंज।।

लता भाव पुष्पानि की तूहि लहरि विषैं की हरइ समूहि।
लहरि स्वभाव तरंग स्वरूप, लहरी तो सम और न भूप।।

सोरठा

लीजै तेरौ नाम, दीजै दान अनेक विधि।
जइए तीरथ धाम, गृहवासिनि कौ ए उचित।।

लीला और न कोई, लीला निज परणति सही।
भेद भाव नहीं होइ, द्रव्य-भाव परणति विषैं।।

लीला मात्रै तूहि, तारै भवसागर थकी।
तो सौ तूहि प्रभूहि, लीलाधर धरणी धरा।।

लीये मुनि निज माहिं, दीयौ वास जु सासतौ।
लुप्त कदाचित नाहिं, गुप्त सदा परगट तुही।।

लुब्ध भाव नहीं कोई, लुब्धक तोहि न पावही।
लुपै न कबहु सोई, लिपै नहीं करमनि थकी।।

दोहा

लुकै भाजि भव वन विषैं, तुव दासनि पैं मोह।
लरि न सकैं दासानि तैं, इह पापी अतिद्रोह।।

लुटै न कबहु ना लुटै, लुटि है नांहि कदापि।
कर्मनि पै तुव सेवका, अतिबल तूहि उदापि।।

लुटि लिये भव वन विषैं, कर्म मिले अति चोर।
अब उपकार करों प्रभू, तुम नरपति अति जोर।।

लूखौ जग सौ होय करि, करि एकाग्र जु चित्त।
तोहि भजैं सोई लहैं, चेतनरूप सुवित्त।।

लू कहिये ताती पवन, लू सम इह भव वाय।
तूहि हरै झर लायकै, अमृत रूप सुराय।।

लूलौ अंध सुकंध चढ़ि, दव सै निकसै जेम।
ज्ञान चरन कै कंध चढ़ि, भव सै निकसै तेम।।

लूला पावैं चरन कौं, अंधा आंखि लहैं हि।
तेरेई परसाद तैं, इह गुरुदेव कहैंहि।।

लेखनि में आवै नहीं, लिख्यौ न कबहू जाय।
तेरौ जस अत्यंत है, लेखक नाहि लिखाय।।

लेनहार भवि रासि कौ, तू अलेख अति लेख।
लेस्या रहित अलेस तू, धारै गुण जु अशेष।।

लेज रावरी बानी है, भव कूपनि तैं काढ़ि।
जीवनि कौ निरवान दे, तू है अतुल गुनाढ़ि।।

लागौ नादि जु काल तैं, समुझ नादि निज रूप।
भ्रमण करावै जगत में, दुखदे महा विरूप।।

।। इति लकार संपूर्णम् ।।

आगे वकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

वश्येंद्रियं वृषाधीशं, वाक वादिनि भासकं।
विशालाक्षं च विश्वेशं, वीतरागं गतक्लमं।।

उपेन्द्रवजा

वृहस्पती की हु न वुद्धि ऐसी, गावैं जु कीर्ति कछु है जु जैसी।
तू ही जु देवा सुवरिष्ठ धी है, तू ही वृहद्भाव धरो यती है।।

वृद्ध प्रबुद्धो वदयिको तू, शुद्ध स्वभावो जगनायको तू।
आनंद मूर्ती हति ही विलासा, ध्यावै न तोकौं जु अभव्य रासा।।

बेसरी

वही तूही वज्री अति सेवैं, वही तूही जातैं शिव लेवैं।
वही तूही चक्री सिर नावैं, वही तूही फणपति अति गावैं।।

बन्यौ ठन्यौ अति सुदंर रूपा, बनि आवैं तोकौं बड़भूपा।
तेरौ सो बानिक तोही पैं, वाचस्पति नहि पर द्रोही पैं।।

वायुरोध उपदेश करै तू, मनरोधन कै हेतु कहै तू।
वायु न तेरै काय हु नाहीं, व्यापक बह्म तूहि निज मांहि।।

वात्सल्यादि प्रकासै तूही, वाच्य वितीत अवाच्य प्रभू ही।
बलि जाऊं तेरी जग नाथा, बारिज चरन भजैं मुनि माथा।।

बाधा रहित विशाल जु तूही, विद्या निधि विद्वान प्रभू ही।
विपुल ज्योति धारक तू देवा, विश्वंभर दे अपनी सेवा।।

विगतराग अविकार विशाला, विगत विहार अहार दयाला।
नित्य विहारी अटल विहारी, रंग विहारी तू हि उधारी।।

विश्वरूप विश्वास स्वरूपा, तू विशिष्ट अतिशिष्ट अनूपा।
महाविक्रमी विश्वमुखा तू, विश्वासी सबकौ हि सखा तू।।

विषहर अमृतधर तू देवा, विषधर पति धारैं तुव सेवा।
विग्रह हरन करन आनंदा, चिदघन चेतन ज्ञानानंदा।।

विदुष विबुध पंडितनामा, पंडित लैहिं भजैं गुणधामा।
तू हि विराजै सर्व जु पासे, ज्ञानस्वरूप आनंद प्रकासै।।

विश्वचक्षु तू विश्वजनेता, तू हि विश्वभूतित्व प्रणेता।
तू विकलंक विमुक्तात्मा है, विश्व भूति अति ज्ञानात्मा है।।

विश्वयोनि निरयोनि गुसांई, विश्व विलोकी अतुल असांई।
परमविवेकी ध्यावही तो ही, देहु विधीश्वर सुविधि जु मोहि।।

विधि प्रेरक तू अविधि विडारे, विधि अविधि तोकौं न निहारै।
वियदाकार अपार जु तू ही, शुद्ध विहाय समो जु अदू ही।।

विभू दूसरौ और न तो सौ, भौंदू जन दूजौ नहि मो सौं।
तौहि विहाय लग्यो भ्रम जारा, ध्यायो नाही जगत अधारा।।

विश्वकर्म तैं न्यारा तूही, विश्व मूरती तू ही प्रभूहि।
तोहि विहावै नित्य जु यौ ही, भाव विभाव गहै नहीं क्यों ही।।

विश्व जु कर्मा तुहि कहावै, करम-करम की रीति कहावै।
वसै विभा जा मांहि अनंता, तूहि विभाधर विश्व लखंता।।

विविध पुकार करैं सुर पूजा, विबुध प्रपूजित तू जग दूजा।
विधुता शेष निबंधन तू ही, संसारार्णव तार प्रभू ही।।

विसतीरण तू विश्व प्रमाणा, पुरुष प्रमाण पुराण सुजाना।
तू वितरिक्त परम सुख भाया, नित्य विमुक्त विमुक्त प्रदाया।।

दोहा

व्यवहारैं सब ज्ञेय कौं, आकर्षण जु करेय।
सुरनर मुनिवर मन हरै, कृष्ण सुनाम धरेय।।

वनवासी है तुव जपैं, भव तन भोग विरक्त।
अनुभौ रस पीवै महा, धर्म शुक्ल अनुरक्त।।

वंदौ श्री भगवान कौं, श्री वल्लभ जो देव।
श्रीधर श्री परणति धरे, प्रणवरूप अति भेव।।

बहुरि असुर तेऊ कहै, सुर्ग बिना जे देव।
विंतर भावन ज्योतिषि, ए भवनत्रिक भेव।।

चौपाई

वस्तु खटाय जाय तजि स्वाद, सो तेरौ श्रुति कहइ अखाद।
सर्व अभक्ष तजैं तुव दास, श्रुति आज्ञा पालैं गुण रास।।

नाराच

वृथा तनौं हि फल्गु नाम, तू न फल्गु भासई।
कहै सुतच वारता, तुही सबै प्रकासई।।

भुजंगप्रयात

विभू चिच्चमत्कार चिंता वितीता, जु चिंतामणी चिंत्य दाता अतीता।
तुही चिद्विलासा सुचिन्मात्र तूही, तुही चित्प्रकासा चिदीशा विभूही।।

सोरठा

विषैं भोग जग झूठि, सोदा सांचा है नहिं।
देकैं जग सो पूठि, निहकामा ह्वै गुण रटै।।

।।इति वकार संपूर्ण।।

आगे ताल्लवी शवर्ण का व्याख्यान करे है—

दोहा

शोक न तेरे जन धरे, आनंदरूप सदीव।
शोभनीक तू ही प्रभू, है अशोक धर पीव।।

शूरवीर को भाव जाजे, शौर्य कहावे नाथ।
सो तेरे दासन विषैं, कायर जगजन साथ।।

श्लोक

शक्तिमूलं च शक्तिशं, धर्मशास्त्रप्रकासकं।
शिवं भवं सदाशीलं, शुद्धं शुक्लं प्रभाधरं।।

इंद्रवज्रा

शक्ति स्वरूपो अति शक्ति तूही, शस्त प्रशस्तो अति है प्रभूही।
भाख्यो सवर्णो जु परोक्ष नामा, तू ही परोक्षो परतक्ष रामा।।

शत्रुहि रागदिक और नाहीं, शत्रुंजयो तूहि सुलोक माहिं।
नहीं जु शस्त्रा नहि अस्त्र वस्त्रा, वीराधि वीरो तुहि ज्ञान शस्त्रा।।

शब्दा न रूपा नहि गंध फासा, तेरै रसा कोई न तू विभासा।
रसी महा तू हि प्रभू रसीला, पावै न तोकौं सठ ने कुशीला।।

दोहा

शमित सकल दुख दोष तू, शमी दमी ध्यावे ही।
शव जु मृतक तेई प्रभू, जे तुहि नहि गावैं हि।।

शनैःशनैः भवपार ह्वै, ले पिपीलिका पंथ।
तुरत विहंगम पंथ तैं, उधरैं मुनि निरग्रंथ।।

अनुष्टुप

शांतरूपी विशुद्धात्मा, शास्ता शासननायकः।
शांतिकारी सदा शुद्धो, शांतिनाथो सुज्ञायको।।

शांतो दांतो प्रकाशात्मा, शास्वतो शाम्यभावकः।
शा शोभा कहिये स्वामी, तूहि शोभा प्रभावकः।।

शास्वती संपदा तेरी, शांत कुंभ समान तू।
शांत कुंभो सुवर्णो है, है सुवर्णो अमान तू।।

चौपाई

शिव निर्वान तनौं है नाम, तू निर्वानरूप अभिराम।
शिव कल्याण नाम हु होय, तो बिनु और न शिव पथ कोय।।

शिव तूही शंकर है तू ही, शुद्ध विशुद्ध प्रबुद्ध प्रभू ही।
शिव कहिये रूद्र हु कौ नाम, महारूद्र ध्यावैं तुव धाम।।

शिवपुर दायक नायक लोक, लोक शिखर राजैं गुण थोक।
शिष्य न काहू कौ तुहि गुरू, शिव मंदिर जग जीवन धरू।।

शिष्ट विशिष्ट महावरवीर, शिष्टाचार प्रकाशक धीर।
शिष्ट पुरुष धारैं तुव सेव, दुष्ट न पावैं तेरो भेव।।

शिखा सूत्र रहित निरग्रंथ, ध्यावैं तोहि धारि तुव पंथ।
शिखरीपति सम निश्चल ध्यान, धारहि तेरे दास सुज्ञान।।

शिखी अगनि भव तुल्य न शिखी, तूहि बुझावै अति रस ऋषि।
शिवा रावरी शक्ति जु होंय, शक्ति अनंत धारै तू सौय।।

शिला सिद्ध परसिद्ध प्रभाव, तहाँ तूहि राजै जिनराव।
स्वगत सर्वगत तू सुखदाय, चरन कमल सेवैं मुनिराय।।

दोहा

शूरवीर तेरे जना, जीतै मोह विकार।
त्यागि शून्यता चित्त की, पावैं ज्ञान अपार।।

शूली कहिये रूद्र कौं, धारै हाथ त्रिशूल।
रूद्र जपै तोकौं प्रभू, तू दयाल शिवमूल।।

शूकर कूकर आदि बहू, निंदि जौनि सठ जीव।
पावैं तेरी भक्ति बिनु, भव भव कष्ट अतीव।।

शून्यवादि आदिक जड़ा, जे तुहि गावै नाहिं।
जनम मरन अतिहि करैं, भव सागर के माहिं।।

शुचि सूत्र बिना नसै, तुव सूत्रैं बिनु जीव।
भव वन में भरमण करैं, दुख पावैं जु अतीव।।

शेखर जग कौ तू सही, भजै शेमुखी धार।
नाम शेमुखी बुद्धि कौ, तू है बुद्धि हु पार।।

।। इति शकार संपूर्णम्।।

आगे षकार का व्याख्यान करे हैं—

श्लोक

षकाराक्षर-कर्तारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम्।
सर्वमात्रामयं धीरं, वीरं वंदे सदोदयं।।

सोरठा

ष कहिये श्रुति मांहि, नाम इहै जु परोक्ष कौ।
यामैं भ्रांति जु नांहि, तू परोक्ष परतक्ष है।।

षटदश भावन भाय, पावैं तेरौ पद मुनि।
षटदश सुर्ग कहाय, सो चाहैं नहिं मुनिवरा।।

षटचालीस जु सार, गुण पावैं तुव भजन तैं।
षटत्रिंशत गुण धार, आइरिया तोकौं भणैं।।

दोहा

षट पंचास कुमारिका, देवी रुचिक निवास।
चरन कमल ध्यावैं प्रभू, तेरे आनंद रासि।।

षष्टि सहसर सुतपिता, चक्री सगर सुग्यान।
तेरे चरन सरोज भजि, पहुंच्यौ पुर निरवान।।

षट षष्टी सहस्र उपरि, त्रयसत अर षट तीस।
अंतर्मुहूर्त एक में, भासै मुनि अवनीस।।

षष्ट सप्ततिलक्षा प्रथक, तेरे चैत्य निवास।
दीप तड़ित अगनी उदधि, मेघ दिसिनि कै भास।।

षट असीति के अर्द्ध ए, तीयालीसा होय।
एती प्रकृति न बंधई, चौथौ ठांण जु सोई।।

षण्णवती सहसा त्रिया, नारी तजि चक्रीश।
खटवाशयन हु त्यागि कै, हैं निरग्रंथ मुनीश।।

।। इति षकार संपूर्णम्।।

आगै दंती सकार का व्याख्यान करै हैं—

श्लोक

सनातनं सदानंदं, सारासार निरूपकं।
सिद्धं शुद्धं सदाबुद्धं, पूजितं सीरपाणिना।।

छंद

सप्त नरक नहिं पावैं दासा, सुर्गादिक हु न चाहैं।
सतरा संजम धारि अनासा, तुव पुर कौंहि उमाहैं।।

सप्त अधिक चालिसा प्रकृति, घाति कर्म की कहिये।
तुव मारण तैं घाति कर्म हरि, केवल बोध जु लहियें।।

सत्तावन आश्रव तू टारै, सत सठि सम्यक भाखैं।
सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चरनमय, तो करि निज रस चाखैं।।

सत्तरि कोड़ा-कोड़ि पयोधि, थिति है दरसन मोहा।
तिरे दास हने प्रभु मोहा, जिनके राग न द्रोहा।।

सत्याणव सहस्र चौरासी, लक्षा तेरे देवल।
सुर्गलोक में नादि अकृत्रिम, इह भासे श्रुति केवल।।

सप्तदशाधिक अर सौ प्रकृति, बंधै पहलै ठाणैं।
पहलौ ठाण उलंघि लहै बुद्ध, तुव-तुव भक्ति जु जाणें।।

सहसर नाम तिहारे जपि करि, भवि पावैं निज वस्तू।
अमित अनंत नाम हैं तेरै, तू प्रभू परम प्रशस्तू॥

बेसरी

सखा जीव मात्रनि कौं तूही, सर्व भूत कौ हितू प्रभू ही।
सरसुती तेरी वानि कहिये, सरसुति करि आतमगुण लहिये॥

सठ मोसौ दूजौ नहि औरा, तोहि विसारि कियौ निज चौरा।
सन्यौ विषैं सौं मैं अति मूढा, तोहि न ध्यायो ह्वै आरूढ़ा॥

सड्यो पड्यो इह देह जु पापा, सौ मैं कुबुधी जान्यों आपा।
सत्य स्वरूप न जान्यौं तू ही, सदा धरे परपंच समूही॥

सधन तूही आतम धन धारै, निधन हरै जम तैं जु उबारैं।
परम समाधि देहु जगराया, मेटि भरमना मूल जु माया॥

सहित अनंत गुणनि तैं तूहि, रहित विभाव सुशक्ति समूही।
निरधन सबही निधन निवासा, लक्ष्मीधर तू अतुल प्रकाशा॥

सहजानंद सहज गति तूही, सहज विभास प्रकास समूही।
सहनशील मुनिराय जु ध्यावैं, सदा सरवदा तोहि जु गावैं॥

सरवर आतम भाव निमग्ना, रटैं तोहि मुनिवर संविग्ना।
कहा सारदी चंदर क्रांती, तुव वानी सादर अति क्रांति॥

दोहा

सार समुच्चय तू कहै, तत्त्व सार तू देव।
साधु समाधि प्रदायका, दै दयाल निज सेव॥

सायं प्रात भजैं तुझैं, भजैं दुपहरि माहिं।
अर्द्ध रात्रि हु भवि भजैं, यामैं संसै नाहिं॥

साधर्मी तेई महा, जे तोसौं लवलीन।
तोसौं जे विमुखा नरा, तेई विधर्मी हीन॥

साकृति और निराकृती, स्वामी तू श्रुतिसार।
साची चरचा रावरी, तो बिनु सर्व असार।।

सानन्दी सद्रूप तू, सालोको अतिलोक।
सामील्यो अति निकट तू, गुण अनंत को थोक।।

सारिष्ठो अति ऋद्ध तू, स्वरस रसीलौ देव।
अति साम्राज्य धुरंधरौ, है सम्राट अछेव।।

चौपाई

सकल त्याग जे आसा पासा, मोह त्यागि जे हौही निरासा।
ते साधु याकै तत पावैं, या बिन जग जन जन्म गुमावै।।

सुवरण वर्ण प्रणव जे ध्यावै, स्तंभन हेतु सबै श्रुति गावै।
पवन चित ए दोऊ थंभै, दोऊ थंभि जु शिव उपलंभै।।

सर्व रोग हर तेरौ ध्यान, गदातीत तू पूरण ज्ञान।
गणना तेरे गुण की नाहिं, तू गणेस अतिगुण तो मांहि।।

दोहा

सोहं सोहं शब्द इह, सब जीवन कै होइ।
सास उसास सहज ही, विरला बूझै कोइ।।

संशय विभ्रम रूप जो, महामोह बलवान।
पारै तोसौं आंतिरौ, उपजावै अज्ञान।।

स्वर धरि तेरौ जस कहैं, नारद सकल प्रवीन।
रूद्रादिक तो कौं भजैं, भजैं चक्रि लवलीन।।

स्वर धरि तोहि जु गावहिं, तात मात जगदेव।
तू सबको त्राता प्रभु, दै अपनी निज सेव।।

स्तुति हू कौं श्रुति में कहैं, नाम फकार प्रवान।
स्तुति तेरी गणधर करैं, सुर-नर करें सुजान।।

सम्यक मुक्ता फल तवै, उपजै अदभुत रूप।
ताकरि भूषित मुनिगना, वरैं स्वसिद्धि अनूप।।

सौ गौरी श्यामा सही, रमा राधिका सोइ।
भवा जिनेद्रा ऋद्धि जो, सौ दौलति हु होइ।।

बेसरी

संवर कोट देहु मम दुर्गा, मोहि न चहियैं तातैं सुर्गा।
कौतुहल कौतुक नहि तेरे, कौटिल्यादिक भाव सु मेरे।।

सोरठा

सांच हु झूठ विसेस, जामैं जीव दया नहीं।
करुणा मई असेस, सत्यादिक भासै तुही।।

सुरझेरा करि देव, उरझेरा हरि जग प्रभु।
दै स्वामी निज सेव, यहि हमारी वीनती।।

दोहा

सौ गौरी श्यामा सही, रमा राधिका सोइ।
भवा जिनेद्रा ऋद्धि जो, सौ दौलति हु होइ।।

उपेन्द्रवज्रा

सुहृद विनेय जनौं का तू ही, अविहीत अवितथ तूहि प्रभूहि।
तू अविलीन विलीन विभावा, तू हि विकल्मष परमस्वभावा।।

।। इति सकार संपूर्णम् ।।

आगे हकार का व्याखान करे हैं—

श्लोक

हरिहरं महावीरं, हार-निहार-संनिभं।
हितं हिरण्यगर्भं च, हीन दीनादि पालकं।।

दोहा

हर्ष रूप आनंद घन, हर्ष विषाद वितीत।
हर हरि जिनवर देव तू, हरि हर पूजि अजीत।।

पद्धरी

है सम्प्रदान तूही अनादि, है अपादान स्वामी जु आदि।
अधिकर्ण तूहि निश्चै स्वरूप, जितकर्ण साध मन जीत भूप।।

दोहा

हरै ढूंढता नादि की, पूरण तेरी ज्योति।
सो विभूति धन संपदा, संपति दौलति होति।।

सोरठा

हरै भूख अर प्यास, जगभूषण तू देव है।
अतिभूषित अतिभास, भूरि अनंत सुगुण तु ही।।

ह्वै सचेत मुनिराय, पाय रावरे उर धरे।
ज्ञान चेतना काय, तुही अकाय अमाय है।।

बेसरी

है टुकैक जीवन जगराया, टुकसी लोकनि की इह माया।
तामें राचि विसार्‌यौ तोकौं, तातैं धिक-धिक है प्रभु मौकों।।

चौपाई

हौं निकृष्ट दुष्ट जु पापिष्ट, तोहि विसारि गहै जु अनिष्ट।
तू ही तारै दै निज बोध, तो बिनु कौन करैं प्रतिबोध।।

।। इति हकार संपूर्णम् ।।

आगे क्षकार का व्याखान करे हैं—

श्लोक

क्षमाधारं रमानाथं, क्षांतिरूपं महाबलं।
क्षिप्तरागादि संतानं, क्षीणमोहं जगद् गुरुं।।

गाथा

क्ष कहिए क्षम नामा, क्षय समरथ तू ही प्रभु सबला।
सबला अबला लखहि न धामा, तेरै अबला न पुत्राद्या।।

क्षत्कहिये क्षय नामा, क्षय हर तूही सु अक्षयो स्वामी।
क्षत्क्षांती फुनि रामा, तूहि क्षमा मूल क्षम देवा।।

क्षमी क्षमा धन धामा, समरथ तो सौ न दूसरौ कोई।
भ्रांति क्षपाहर रामा, क्षपा निसा नाम बुध भाषैं।।

क्षत पीरा कौ नामा, क्षतहर तुही जु क्षत्रियाधीशा।
क्षति नहिं तेरे रामा, क्षति नाथा तूहि जगनाथा।।

क्षणिकमती नहिं पावैं, गावैं तो कौं मुनि क्षमावंता।
भव्य जना अति भावैं, वीरा तू क्षत्र-वति पूरा।।

क्षपित कलंका तूही, क्षण-क्षण ध्यावै यतीश्वरा संता।
सुद्ध सुबुद्ध प्रभू ही, क्षपाकरा कोटि नख मांहें।।

क्षति सम क्षमा जिनौं के, जल सम शांती सुवन्हि सी क्रांती।
पवन समान तिनौंकै, निःसंगत ताहितैं भक्ता।।

श्लोक

क्षोणीधरं महाधीरं क्षौमालंकार वर्जितं।
क्षत्राधिपं सदा शांतं क्षः प्रकाशंनमाम्यहं।।

❋❋❋